[2025] 1 एस.सी.आर. 190 : 2025 आईएनएससी 3

बर्नार्ड फ्रांसिस जोसेफ वाज़ एवं अन्य

बनाम

कर्नाटक सरकार एवं अन्य

(सिविल अपील सं. 17/2025)

02 जनवरी 2025

[B.R. गवई* तथा K.V. विश्वनाथन, न्यायाधीश]

विचारणीय मुद्दा

यहाँ अपीलकर्ताओं की भूमि अधिग्रहित की गई थी और उन्हें बाईस वर्षों तक बिना किसी प्रतिकर का भुगतान किए उनकी संपत्ति से वंचित रखा गया। प्रतिकर के भुगतान हेतु, अपीलकर्ताओं ने यह निवेदन किया कि भूमि के बाजार मूल्य के निर्धारण की तिथि को पुरस्कार की तिथि के अनुसार माना जाए, न कि प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि के अनुसार। क्या इस न्यायालय को अपीलकर्ताओं की भूमि के बाजार मूल्य के निर्धारण हेतु तिथि परिवर्तित करने का निर्देश देना चाहिए।

शीर्ष टिप्पणियाँ†

भारत का संविधान - अनुच्छेद 300-ए - भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 - कर्नाटक औद्योगिक क्षेत्र विकास अधिनियम, 1966 - वर्ष 1995 से 1997 के बीच, यहाँ अपीलकर्ताओं ने विभिन्न आवासीय भूखंड क्रय किए - दिनांक 29.01.2003 को, प्रतिवादी सं. 2 (केआईएडीबी) द्वारा उक्त भूमि के अधिग्रहण हेतु प्रारंभिक अधिसूचना जारी की गई - अपीलकर्ताओं की भूमि का कब्जा प्रतिवादी सं. 2 (केआईएडीबी) द्वारा ले लिया गया, तथापि ऐसे अधिग्रहण के संबंध में तत्काल कोई पुरस्कार पारित नहीं किया गया - दिनांक 22.04.2019 को, विशेष भूमि अधिग्रहण अधिकारी (एसएलएओ) ने पूर्ववर्ती भूमिधारकों की भूमि के संबंध में प्रतिकर के भुगतान हेतु पुरस्कार पारित किया - उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने दिनांक 22.04.2019 को एसएलएओ द्वारा पारित पुरस्कार को निरस्त कर दिया - उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने यहाँ अपीलकर्ताओं द्वारा दायर रिट अपील को निरस्त कर दिया - अपीलकर्ताओं द्वारा भूमि के बाजार मूल्य के निर्धारण हेतु तिथि को प्रारंभिक अधिसूचना के स्थान पर पुरस्कार की तिथि के अनुसार परिवर्तित करने का निवेदन:

* लेखक

अभिनिर्धारित किया गया कि: अपीलकर्त्ताओं ने प्रश्नगत भूखंड आवासीय मकानों के निर्माण हेतु क्रय किए थे - न केवल वे निर्माण करने में असमर्थ रहे, बल्कि उन्हें इसके लिए कोई प्रतिकर भी नहीं दिया गया - अपीलकर्ताओं को पिछले बाईस वर्षों की उक्त अवधि में बिना किसी प्रतिकर के उनकी संपत्ति से वंचित रखा गया - यद्यपि संपत्ति का अधिकार अब मौलिक अधिकार नहीं है, तथापि भारत के संविधान के अनुच्छेद 300-ए के प्रावधानों के दृष्टिगत, यह एक संवैधानिक अधिकार है - किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से बिना विधि के अनुसार उचित प्रतिकर प्रदान किए वंचित नहीं किया जा सकता - वर्तमान मामले में यह स्पष्ट है कि प्रतिकर प्राप्त न होने में कोई विलंब अपीलकर्त्ताओं के कारण नहीं था, बल्कि यह राज्य/केआईएडीबी के अधिकारियों के शिथिल दृष्टिकोण के कारण हुआ, जिसके परिणामस्वरूप अपीलकर्त्ताओं को प्रतिकर से वंचित रखा गया - केवल अवमानना कार्यवाही में नोटिस जारी होने के पश्चात ही, एसएलएओ द्वारा दिनांक 22.04.2019 को अधिग्रहित भूमि के बाजार मूल्य के निर्धारण हेतु वर्ष 2011 में प्रचलित मार्गदर्शक मूल्यों के आधार पर प्रतिकर का निर्धारण किया गया - उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने भी यह नहीं कहा कि एसएलएओ द्वारा तिथि को वर्ष 2011 तक परिवर्तित कर प्रतिकर का निर्धारण अन्यायपूर्ण था, बल्कि केवल इस आधार पर पुरस्कार को निरस्त किया कि एसएलएओ के पास ऐसा करने का अधिकार क्षेत्र नहीं था - यदि प्रतिकर के भुगतान में अत्यधिक विलंब तथा इस प्रकार अनुच्छेद 300-ए के अंतर्गत अपीलकर्त्ताओं के संवैधानिक अधिकार से वंचित किए जाने के कारण भूमि अधिग्रहण कार्यवाही निरस्त कर दी जाती है, तो परियोजना को बचाने के लिए राज्य/केआईएडीबी के पास एकमात्र उपाय यह होगा कि अब निष्पक्ष प्रतिकर एवं पारदर्शिता के साथ भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास एवं पुनर्स्थापन अधिनियम, 2013 के अंतर्गत लागू प्रावधानों का आह्वान करते हुए नई अधिग्रहण अधिसूचना जारी की जाए, जिससे लोक निधि पर भारी व्यय होगा - अतः, भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अंतर्गत इस न्यायालय की शक्ति का प्रयोग करते हुए, न्याय के हित में यह उपयुक्त पाया गया कि एसएलएओ को निर्देश दिया जाए कि यहाँ अपीलकर्त्ताओं को देय प्रतिकर का निर्धारण दिनांक 22.04.2019 को प्रचलित बाजार मूल्य के आधार पर किया जाए - अपीलकर्त्ताओं को 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम के अंतर्गत उपलब्ध सभी वैधानिक लाभ भी प्राप्त होंगे। [पैरा 49, 50, 54, 55, 57]

भूमि अधिग्रहण - प्रतिकर - धन का मूल्य - त्वरित रूप से प्रतिकर का वितरण:

अभिनिर्धारित किया गया कि: यह विवादित नहीं किया जा सकता कि धन वही है जो धन से खरीदा जा सकता है - धन का मूल्य इस विचार पर आधारित है कि धन को निवेश कर प्रतिफल अर्जित किया जा सकता है तथा मुद्रास्फीति के कारण समय के साथ धन की क्रय

शक्ति घटती है - अपीलकर्ता वर्ष 2003 में प्रतिकर की राशि से जो क्रय कर सकते थे, वह वर्ष 2025 में नहीं कर सकते - अतः यह अत्यंत आवश्यक है कि भूमि अधिग्रहण के मामलों में पुरस्कार का निर्धारण तथा प्रतिकर का वितरण त्वरित रूप से किया जाए। [पैरा 48]

उद्धृत निर्णयजन्य विधि

राम चंद एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, 1993 आईएनएससी 315 : [1993] अनुपूरक 2 एससीआर 558 : **(1994) 1 एससीसी 44;** *विद्या देवी बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य एवं अन्य,* 2020 आईएनएससी 23 : [2020] 1 एससीआर 749 : **(2020) 2 एससीसी 569;** *अल्ट्रा-टेक सीमेंट लिमिटेड बनाम मस्त राम एवं अन्य,* 2024 आईएनएससी 709 : [2024] 9 एससीआर 443 : **2024 एससीसी ऑनलाइन 2598 - अवलंबित।**

तुकाराम काना जोशी एवं अन्य, पावर-ऑफ-अटॉर्नी धारक के माध्यम से बनाम महाराष्ट्र औद्योगिक विकास निगम एवं अन्य, 2012 आईएनएससी 503 : [2012] 13 एससीआर 29 **: (2013) 1 एससीसी 353;** *महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य,* 2003 आईएनएससी 137 : [2003] 2 एससीआर 530 : **(2003) 4 एससीसी 200;** *सक्षम प्राधिकारी बनाम बारंगोर जूट फैक्टरी एवं अन्य,* 2005 आईएनएससी 585 : [2005] अनुपूरक 5 एससीआर 421 : **(2005) 13 एससीसी 477;** *हाजी सईद खान एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य* **(2001) 9 एससीसी 513;** *के. कृष्णा रेड्डी एवं अन्य बनाम विशेष उप कलेक्टर, भूमि अधिग्रहण इकाई II, एलएमडी करीमनगर, आंध्र प्रदेश,* 1988 आईएनएससी 265 : [1988] अनुपूरक 2 एससीआर 853 : **(1988) 4 एससीसी 163 - संदर्भित।**

अधिनियमों की सूची

कर्नाटक औद्योगिक क्षेत्र विकास अधिनियम, 1966; निष्पक्ष प्रतिकर एवं पारदर्शिता के साथ भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास एवं पुनर्स्थापन अधिनियम, 2013; भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894; राष्ट्रीय राजमार्ग अधिनियम, 1956; संविधान (चवालीसवाँ संशोधन) अधिनियम, 1978; भारत का संविधान।

प्रमुख शब्दों की सूची

संविधान का अनुच्छेद 300-ए; संपत्ति का अधिकार; संवैधानिक अधिकार; भूमि अधिग्रहण; प्रारंभिक अधिसूचना; प्रतिकर का भुगतान; पर्याप्त प्रतिकर; प्रतिकर से वंचित करना; प्रतिकर

का वितरण; भूमि का बाजार मूल्य; भूमि के बाजार मूल्य के निर्धारण हेतु तिथि परिवर्तित करना; प्रतिकर के भुगतान में अत्यधिक विलंब; कल्याणकारी राज्य।

मामले की उत्पत्ति

सिविल अपीलीय अधिकारिता: सिविल अपील सं. 17/2025

कर्नाटक उच्च न्यायालय, बेंगलुरु द्वारा डब्ल्यू.ए. सं. 678/2022 में दिनांक 22.11.2022 को पारित निर्णय एवं आदेश से

अधिवक्तागण

आर. चंद्रचूड़, धुली वेंकट कृष्णा, अधिवक्ता, अपीलकर्त्ता के लिए।

अविश्कार सिंहवी, ए.ए.जी., आत्माराम एन.एस. नाडकर्णी, वरिष्ठ अधिवक्ता, शरणगौड़ा पाटिल, श्रीमती सुप्रीता पाटिल, ज्योतिष पांडेय, एस.एस. रेबेलो, सुश्री दीप्ति आर्या, अर्जु पॉल, विदुर नायर (एम/एस एस-लीगल एसोसिएट्स के लिए), वी.एन. रघुपाठी, पुरुषोत्तम शर्मा त्रिपाठी, एस.जे. अमिथ, श्रीमती वाणी व्यास, प्रखर सिंह, अधिवक्ता, उत्तरदाताओं के लिए।

सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

निर्णय

बी.आर. गवई, न्यायाधीश

1. अनुमति प्रदान की गई।

2. यह अपील कर्नाटक उच्च न्यायालय, बेंगलुरु द्वारा रिट अपील सं. 678/2022 (एल.ए-केआईएडीबी) में दिनांक 22 नवम्बर 2022 को पारित अंतिम निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने यहाँ अपीलकर्त्ताओं द्वारा दायर रिट अपील को, जो उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 18 अप्रैल 2022 को रिट याचिका सं. 1627/2021 में पारित निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध थी, *निरस्त* कर दिया।

तथ्य:

3. संक्षेप में, वर्तमान अपील के उद्भव हेतु तथ्य इस प्रकार हैं:

3.1. वर्ष 1995 से 1997 के बीच, यहाँ अपीलकर्त्ताओं ने कर्नाटक राज्य के बेंगलुरु दक्षिण तालुक, उत्तरहल्ली होबली के गोत्तिगेरे ग्राम में विभिन्न आवासीय भूखंड

पंजीकृत विक्रय विलेखों के माध्यम से क्रय किए और अपने-अपने भूखंडों के पूर्ण स्वामी बन गए।

3.2. दिनांक 3 अप्रैल 1997 को, कर्नाटक सरकार (प्रतिवादी सं. 1) तथा नंदी इन्फ्रास्ट्रक्चर कॉरिडोर एंटरप्राइज लिमिटेड (प्रतिवादी सं. 6) के बीच एक रूपरेखा समझौता (आगे "एफडब्ल्यूए") निष्पादित किया गया, जिसमें बेंगलुरु-मैसूर अवसंरचना कॉरिडोर परियोजना (आगे "बेंगलुरु-मैसूर अवसंरचना कॉरिडोर परियोजना" या "बीएमआईसीपी") की परिकल्पना की गई। एफडब्ल्यूए के अनुसार, राज्य सरकार ने निजी व्यक्तियों से लगभग 13,237 एकड़ भूमि तथा लगभग 6,956 एकड़ सरकारी भूमि अधिग्रहित करने का दायित्व लिया। कुल मिलाकर 20,193 एकड़ भूमि को प्रतिवादी सं. 6 (नंदी इन्फ्रास्ट्रक्चर कॉरिडोर एंटरप्राइज लिमिटेड) के पक्ष में बीएमआईसीपी के क्रियान्वयन हेतु हस्तांतरित करने पर सहमति हुई।

3.3. दिनांक 14 अक्टूबर 1998 को, प्रतिवादी सं. 6 ने कर्नाटक औद्योगिक क्षेत्र विकास बोर्ड (आगे "केआईएडीबी") (प्रतिवादी सं. 2) के समक्ष परियोजना हेतु भूमि उपलब्ध कराने के लिए आवेदन किया।

3.4. दिनांक 29 जनवरी 2003 को, कर्नाटक औद्योगिक क्षेत्र विकास अधिनियम, 1966 (आगे "के.आई.ए.डी अधिनियम") की धारा 28 की उपधारा (1) के अंतर्गत प्रतिवादी सं. 2 (केआईएडीबी) द्वारा बीएमआईसीपी के लिए भूमि अधिग्रहण हेतु प्रारंभिक अधिसूचना जारी की गई। के.आई.ए.डी अधिनियम की धारा 28 की उपधारा (2) के अंतर्गत भूमिधारकों से आपत्तियाँ आमंत्रित करते हुए नोटिस जारी किए गए। अपीलकर्त्ताओं ने भी अपनी आपत्तियाँ प्रस्तुत कीं।

3.5. दिनांक 5 जुलाई 2003 को, प्रारंभिक अधिसूचना के विरुद्ध प्राप्त आपत्तियों पर विचार करने के पश्चात, विशेष उपायुक्त, केआईएडीबी (प्रतिवादी सं. 3) द्वारा अंतिम अधिसूचना जारी की गई।

3.6. दिनांक 22 नवम्बर 2005 को, अपीलकर्त्ताओं की भूमि का कब्जा प्रतिवादी सं. 2 (केआईएडीबी) द्वारा लिया गया और तत्पश्चात उसे प्रतिवादी सं. 6 (नंदी इन्फ्रास्ट्रक्चर कॉरिडोर एंटरप्राइज लिमिटेड) तथा उसकी सहायक संस्था नंदी इकोनॉमिक कॉरिडोर एंटरप्राइजेज लिमिटेड (एनईसीई) (प्रतिवादी सं. 7) को हस्तांतरित कर दिया गया। तथापि, ऐसे अधिग्रहण के संबंध में तत्काल कोई पुरस्कार पारित नहीं किया गया।

3.7. वर्ष 2009-10 में, भूमिधारकों ने कर्नाटक उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिकाएँ दायर कीं, जिनमें उनकी भूमि से संबंधित अधिग्रहण अधिसूचनाओं को निरस्त करने की प्रार्थना की गई। *वैकल्पिक रूप से,* भूमिधारकों ने संबंधित प्राधिकारियों को समान आयाम के आवासीय भूखंड आवंटित करने का निर्देश देने की प्रार्थना की।

3.8. दिनांक 15 जून 2011 के निर्णय एवं आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि इतनी विलंबित अवस्था में अधिग्रहण अधिसूचनाओं को निरस्त नहीं किया जा सकता तथा भूमिधारकों को वैकल्पिक भूखंड आवंटित करने का कोई निर्देश भी नहीं दिया जा सकता। परिणामस्वरूप, भूमिधारकों द्वारा दायर रिट याचिकाओं के समूह को *निरस्त कर दिया गया,* तथापि यह स्वतंत्रता सुरक्षित रखी गई कि यदि कोई पुनर्वास कार्यक्रम विशेष रूप से तैयार किया जाता है या कोई कल्याणकारी योजना सामान्य रूप से उपलब्ध होती है, तो संबंधित प्राधिकारियों के समक्ष आवेदन किया जा सकता है।

3.9. दिनांक 12 फरवरी 2016 को, उच्च न्यायालय के दिनांक 15 जून 2011 के निर्णय एवं आदेश के अनुसार, कुछ भूमिधारकों ने अन्य बातों *के साथ* कर्नाटक सरकार, केआईएडीबी तथा नंदी इन्फ्रास्ट्रक्चर कॉरिडोर एंटरप्राइज लिमिटेड के समक्ष यह निवेदन प्रस्तुत किया कि एफडब्ल्यूए के अंतर्गत अनिवार्य रूप से अपेक्षित पुनर्वास योजना बनाई जाए तथा यथाशीघ्र योजना के अंतर्गत लाभों सहित वैकल्पिक भूखंड आवंटित किए जाएँ।

3.10. उनके प्रतिवेदन पर विचार न किए जाने के कारण, भूमिधारकों ने कर्नाटक उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिकाएँ दायर कीं, जिनकी संख्या डब्ल्यू.पी. सं. 49812-49863/2016 (एल.ए -केआईएडीबी) थी, जिसमें यह प्रार्थना की गई कि कर्नाटक राज्य तथा केआईएडीबी को दिनांक 12 फरवरी 2016 के प्रतिवेदन में किए गए निवेदन को यथाशीघ्र लागू करने का निर्देश दिया जाए।

3.11. दिनांक 24 मार्च 2017 के आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश ने भूमिधारकों द्वारा दायर रिट याचिकाओं का *निस्तारण* करते हुए कर्नाटक राज्य तथा केआईएडीबी को यह निर्देश दिया कि वे उक्त प्रतिवेदन पर विचार करें तथा विधि के अनुसार यथाशीघ्र उचित आदेश पारित करें।

3.12. माननीय एकल न्यायाधीश के दिनांक 24 मार्च 2017 के आदेश के अनुपालन न किए जाने का आरोप लगाते हुए, भूमिधारकों द्वारा अवमानना याचिकाएँ सी.सी.सी. सं. 2434/2018 तथा सी.सी.सी. सं. 18-65/2019 दायर की गईं।

3.13. अवमानना याचिकाओं के लंबित रहने के दौरान, विशेष भूमि अधिग्रहण अधिकारी-1, केआईएडीबी (बीएमआईसीपी), बेंगलुरु (आगे "एसएलएओ") (प्रतिवादी सं. 4) ने दिनांक 22 अप्रैल 2019 को पूर्ववर्ती भूमिधारकों की भूमि के संबंध में प्रतिकर के भुगतान हेतु पुरस्कार पारित किया। महाधिवक्ता द्वारा दिए गए विधिक मत के अनुसार, प्रतिवादी सं. 4 ने प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि को 29 जनवरी 2003 से वर्ष 2011 तक स्थगित करने का निर्णय लिया तथा उक्त वर्ष में प्रचलित *मार्गदर्शक* दरों के आधार पर पुरस्कार निर्धारित किया। इस प्रकार 11 एकड़ 1.25 गुंटा भूमि के लिए रु. 32,69,45,789/- की राशि निर्धारित की गई।

3.14. दिनांक 22 अप्रैल 2019 के पुरस्कार के दृष्टिगत, केआईएडीबी द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष भूमिधारकों द्वारा प्रारंभ की गई अवमानना कार्यवाही में अनुपालन प्रतिवेदन के साथ एक अभिस्वीकृति प्रस्तुत की गई। फलस्वरूप, उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने दिनांक 27 नवम्बर 2019 के आदेश द्वारा अवमानना याचिकाओं को यह स्वतंत्रता देते हुए *वापस लिया हुआ मानकर निरस्त कर दिया* कि अभिस्वीकृति को विधि के अनुसार चुनौती दी जा सकती है।

3.15. दिनांक 19 जून 2019 को, प्रतिवादी सं. 6 और 7 (आगे संयुक्त रूप से "परियोजना प्रवर्तक" कहलाएंगे) ने कर्नाटक उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिकाएँ, डब्ल्यू.पी. सं. 26085/2019 तथा डब्ल्यू.पी. सं. 31407/2019 दायर कीं, जिनमें एसएलएओ द्वारा पारित विभिन्न पुरस्कारों, जिनमें दिनांक 22 अप्रैल 2019 का पुरस्कार भी सम्मिलित था, को चुनौती दी गई। परियोजना प्रवर्तक दिनांक 22 अप्रैल 2019 के पुरस्कार से इस आधार पर व्यथित थे कि उनके प्रति आरोपणीय न होने वाले विलंब के कारण उन्हें अधिक प्रतिकर का भुगतान करने के लिए बाध्य किया जा रहा है। उनका यह कथन था कि प्रतिकर का निर्धारण भूमि के बाजार मूल्य के आधार पर प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि के अनुसार किया जाना चाहिए तथा उक्त तिथि को परिवर्तित नहीं किया जा सकता था।

3.16. दिनांक 5 जनवरी 2021 को, पूर्ववर्ती भूमिधारकों ने परियोजना प्रवर्तकों द्वारा दायर रिट याचिकाओं में पक्षकार बनाए जाने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया। तत्पश्चात, यहाँ अपीलकर्त्ताओं ने दिनांक 1 जून 2021 को डब्ल्यू.पी. सं. 1627/2021 के रूप में एक स्वतंत्र रिट याचिका दायर की। अपीलकर्त्ताओं को दिनांक 22 अप्रैल 2019 के पुरस्कार से इस कारण व्यथा थी कि यद्यपि उनकी भूमि वर्ष 2003 में अधिग्रहित की गई थी, तथापि 18 वर्षों के उपरांत भी उन्हें उक्त अधिग्रहण के

लिए कोई प्रतिकर वितरित नहीं किया गया। उनका यह कथन था कि प्रतिकर का निर्धारण भूमि के वर्तमान बाजार मूल्य के अनुसार किया जाना चाहिए।

3.17. दिनांक 18 अप्रैल 2022 के संयुक्त निर्णय एवं आदेश द्वारा, कर्नाटक उच्च न्यायालय, बेंगलुरु के माननीय एकल न्यायाधीश ने परियोजना प्रवर्तकों द्वारा दायर रिट याचिकाओं को *स्वीकार* किया। उच्च न्यायालय ने प्रतिवादी सं. 4 (एसएलएओ) द्वारा पारित दिनांक 22 अप्रैल 2019 के पुरस्कार को निरस्त कर दिया। परियोजना प्रवर्तकों द्वारा दायर रिट याचिकाओं में लिए गए निर्णय के परिणामस्वरूप, यहाँ अपीलकर्त्ताओं द्वारा दायर रिट याचिका का *निस्तारण* इस आधार पर किया गया कि वह विचारार्थ शेष नहीं रही, क्योंकि दिनांक 22 अप्रैल 2019 का पुरस्कार *निरस्त कर दिया गया था।* अंततः, उच्च न्यायालय ने संबंधित प्राधिकारियों को निर्देश दिया कि वे विधि के अनुसार तथा पक्षकारों को पर्याप्त और युक्तिसंगत अवसर प्रदान करने के पश्चात यथाशीघ्र, और किसी भी स्थिति में तीन माह की अवधि के भीतर, नवीन पुरस्कार पारित करें।

3.18. उक्त से व्यथित होकर, यहाँ अपीलकर्त्ताओं ने रिट अपील सं. 678/2022 (एल.ए.-केआईएडीबी) दायर की। दिनांक 22 नवम्बर 2022 के आक्षेपित निर्णय एवं आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने यहाँ अपीलकर्त्ताओं द्वारा दायर रिट अपील को निरस्त कर दिया। अतः वर्तमान विशेष अनुमति के माध्यम से यह अपील दायर की गई है।

4. यहाँ अपीलकर्त्ताओं की ओर से उपस्थित प्रबुद्ध अधिवक्ता श्री आर. चंद्रचूड़, प्रतिवादी सं. 6 और 7 की ओर से प्रबुद्ध वरिष्ठ अधिवक्ता श्री आत्माराम एन.एस. नाडकर्णी, कर्नाटक राज्य की ओर से उपस्थित प्रबुद्ध अतिरिक्त महाधिवक्ता श्री अविश्कार सिंहवी तथा प्रतिवादी सं. 2 से 5 की ओर से श्री पुरुषोत्तम शर्मा त्रिपाठी को सुना गया।

प्रस्तुतियाँ:

5. श्री चंद्रचूड़ ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने माननीय एकल न्यायाधीश के निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध दायर रिट अपील को "अकालिक" मानकर त्रुटिपूर्वक निरस्त किया। यह प्रस्तुत किया गया कि रिट अपील अकालिक नहीं थी, क्योंकि भूमि के बाजार मूल्य के निर्धारण की तिथि को प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि के स्थान पर पुरस्कार की तिथि के अनुसार परिवर्तित करने का अपीलकर्त्ताओं का निवेदन माननीय एकल न्यायाधीश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था और इस प्रकार यह मुद्दा अपीलकर्त्ताओं के विरुद्ध निर्णीत हो चुका था। यह भी प्रस्तुत किया गया कि अपीलकर्त्ताओं की भूमि के अधिग्रहण

हेतु प्रारंभिक अधिसूचना पारित हुए 21 वर्ष से अधिक समय व्यतीत हो चुका है और अब तक उन्हें कोई प्रतिकर प्राप्त नहीं हुआ है। इस न्यायालय के निर्णयों ***राम चंद एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य*** [1] तथा ***तुकाराम काना जोशी एवं अन्य पावर-ऑफ-अटॉर्नी धारक के माध्यम से बनाम महाराष्ट्र औद्योगिक विकास निगम एवं अन्य,***[2] पर निर्भर करते हुए यह प्रस्तुत किया गया कि अपवादात्मक मामलों में प्राधिकारियों को यह निर्देश दिया जाना चाहिए कि वे प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि को काल्पनिक रूप से परिवर्तित करते हुए पुरस्कार की तिथि के अनुसार भूमि के बाजार मूल्य के आधार पर प्रतिकर का निर्धारण करें। अंततः यह प्रस्तुत किया गया कि प्रतिकर का निर्धारण निष्पक्ष प्रतिकर एवं पारदर्शिता के साथ भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास एवं पुनर्स्थापन अधिनियम, 2013 (आगे "2013 एल.ए अधिनियम") के प्रावधानों के अनुसार किया जाना चाहिए, क्योंकि के.आई.ए.डी अधिनियम की धारा 30 के अनुसार भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 (आगे "1894 एल.ए अधिनियम") के प्रावधानों को प्रतिकर के निर्धारण और पुरस्कार के लिए यथावत लागू किया गया है। इस संबंध में अपीलकर्ताओं के प्रबुद्ध अधिवक्ता द्वारा इस न्यायालय के निर्णय ***महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य*** [3] पर निर्भरता रखी गई।

6. इसके विपरीत, प्रतिवादी सं. 6 और 7 की ओर से श्री नाडकर्णी ने प्रस्तुत किया कि वर्ष 2009 से 2012 के बीच, परियोजना प्रवर्तकों ने प्रतिवादी सं. 2 (केआईएडीबी) को अनेक पत्र लिखकर पुरस्कार पारित करने का अनुरोध किया। यह भी प्रस्तुत किया गया कि चूँकि एसएलएओ द्वारा कोई पुरस्कार पारित नहीं किया गया, इसलिए परियोजना प्रवर्तकों को उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका दायर करनी पड़ी, जिसमें पुरस्कार पारित करने का निर्देश देने की प्रार्थना की गई, जिसे वर्ष 2013 में स्वीकार किया गया। तत्पश्चात, अनुपालन न होने पर परियोजना प्रवर्तकों ने वर्ष 2015 में अवमानना कार्यवाही प्रारंभ की, क्योंकि तब भी कोई पुरस्कार पारित नहीं किया गया था। अतः यह प्रस्तुत किया गया कि यदि यह न्यायालय अतिरिक्त प्रतिकर प्रदान करने या तिथि परिवर्तित करने का कोई निर्देश देने का इच्छुक है, तो यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि परियोजना प्रवर्तकों की ओर से कोई त्रुटि या विलंब नहीं था, जिन्होंने समझौते के अनुसार प्रतिवादी सं. 2 (केआईएडीबी) के पास प्रतिकर जमा कर दिया था, और अतः कोई अतिरिक्त दायित्व राज्य सरकार और/या केआईएडीबी पर ही डाला जाना चाहिए। इस न्यायालय के निर्णय ***सक्षम प्राधिकारी बनाम बारांगोर जूट फैक्ट्री एवं अन्य,***[4] पर निर्भर करते हुए यह प्रस्तुत किया गया कि

---

1 1993 आईएनएससी 315 : [1993] अनुपूरक 2 एससीआर 558 : (1994) 1 एससीसी 44

2 2012 आईएनएससी 503 : [2012] 13 एससीआर 29 : (2013) 1 एससीसी 353

3 2003 आईएनएससी 137 : [2003] 2 एससीआर 530 : (2003) 4 एससीसी 200

4 2005 आईएनएससी 585 : [2005] अनुपूरक 5 एससीआर 421 : (2005) 13 एससीसी 477

तिथि का परिवर्तन केवल अत्यंत दुर्लभ परिस्थितियों में ही किया जा सकता है। यह भी प्रस्तुत किया गया कि 2013 LA अधिनियम के अंतर्गत प्रतिकर प्रदान करने का कोई प्रश्न नहीं उठता और इस न्यायालय के समक्ष एक पूर्णतः नया मामला प्रस्तुत किया गया है, जो माननीय एकल न्यायाधीश या उच्च न्यायालय की खंडपीठ के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया था। अंततः यह प्रस्तुत किया गया कि अपीलकर्त्ताओं ने कभी भी राज्य सरकार/एसएलएओ को पुरस्कार पारित करने का निर्देश देने हेतु आवेदन नहीं किया और इस संबंध में कदम केवल वर्ष 2021 में उठाए गए, जो परियोजना प्रवर्तकों द्वारा प्रारंभ की गई विभिन्न कार्यवाहियों के पश्चात किए गए।

7. प्रतिवादी सं. 1 की ओर से श्री सिंहवी ने प्रस्तुत किया कि अपीलकर्त्ताओं के दावे अकालिक तथा काल्पनिक हैं, क्योंकि उन्होंने प्रचलित पुरस्कार कार्यवाही के अंतर्गत उपलब्ध उपायों का अभी तक उपयोग नहीं किया है। यह भी प्रस्तुत किया गया कि उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने आक्षेपित निर्णय एवं आदेश में स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि अधिग्रहण अधिसूचना की तिथि को परिवर्तित करने का प्रश्न केवल एसएलएओ द्वारा पुरस्कार पारित किए जाने के पश्चात ही विचारणीय हो सकता है। अतः यह प्रस्तुत किया गया कि वर्तमान अपील इस अवस्था में ग्राह्य नहीं है।

8. प्रतिवादी सं. 2 से 5 की ओर से श्री पुरुषोत्तम शर्मा त्रिपाठी ने प्रस्तुत किया कि एसएलएओ ने दिनांक 22 अप्रैल 2019 का पुरस्कार प्रबुद्ध महाधिवक्ता द्वारा तिथि परिवर्तन के संबंध में दिए गए विशिष्ट मत के आधार पर पारित किया। यह प्रस्तुत किया गया कि उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश ने अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री पर विचार करने के पश्चात उक्त पुरस्कार को निरस्त कर दिया तथा एसएलएओ को एक निर्धारित समय सीमा के भीतर नवीन पुरस्कार पारित करने का निर्देश दिया। यह भी प्रस्तुत किया गया कि उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश के निर्देशों के अनुपालन में, एसएलएओ ने अब अधिग्रहित भूमि के संबंध में नवीन पुरस्कार पारित कर दिए हैं और यदि अपीलकर्त्ताओं को प्रदत्त प्रतिकर से कोई आपत्ति है, तो वे विधि के अनुसार उपलब्ध उपाय अपना सकते हैं। अतः यह प्रस्तुत किया गया कि इस न्यायालय को माननीय एकल न्यायाधीश तथा उच्च न्यायालय की खंडपीठ के समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

विचार-विमर्श एवं विश्लेषण:

9. अपीलकर्त्ताओं के मामले पर विचार करने हेतु, उच्च न्यायालय के समक्ष दायर उनकी रिट याचिका के प्रार्थना खंड का उल्लेख करना उपयुक्त होगा। यहाँ अपीलकर्त्ताओं ने डब्ल्यू.पी.

सं. 1627/2021 (एलए-केआईएडीबी) दायर की थी, जिसमें निम्नलिखित प्रार्थनाएँ की गई थीं:

"जिस कारण, याचिकाकर्ता विनम्रतापूर्वक प्रार्थना करते हैं कि यह माननीय न्यायालय कृपया:

a. प्रतिवादी सं. 4 द्वारा पारित दिनांक 22.04.2019 के आक्षेपित पुरस्कार, जो सं. एल.ए.क्यू, एसआर/39 (26 बी, 10, 13, 14)/1998-99, 39 (30, 31, 37, 38, 40)/2002-03 एसएलएओ-1 के अंतर्गत है तथा परिशिष्ट - ए के रूप में संलग्न है, को निरस्त एवं अपास्त करने हेतु सर्टियोरारी की रिट अथवा उसी प्रकृति की अन्य रिट जारी करें;

b. प्रार्थना (ए) के परिणामस्वरूप, प्रतिवादियों को निर्देश देने हेतु मांडमस की रिट अथवा उसी प्रकृति की अन्य रिट जारी करें कि वे याचिकाकर्ताओं को प्रतिकर निर्धारण हेतु नोटिस जारी करें तथा पुरस्कार भूमि के बाजार मूल्य के अनुसार, जो पुरस्कार पारित करने की तिथि के निकटतम हो, निर्धारित करें;

c. इस मामले की परिस्थितियों में न्याय एवं समता के हित में यह माननीय न्यायालय जो अन्य राहत उपयुक्त समझे, प्रदान करें।"

10. यह उल्लेखनीय है कि यहाँ अपीलकर्ताओं से पूर्व, प्रतिवादी सं. 6 और 7 (परियोजना प्रवर्तक) ने भी उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिकाएँ दायर की थीं। माननीय एकल न्यायाधीश के दिनांक 18 अप्रैल 2022 के निर्णय एवं आदेश के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि परियोजना प्रवर्तकों ने डब्ल्यू.पी. सं. 26085/2019 तथा डब्ल्यू.पी. सं. 31407/2019 के माध्यम से भी पुरस्कारों को चुनौती दी थी। अतः माननीय एकल न्यायाधीश के समक्ष तीनों रिट याचिकाओं में दिनांक 22 अप्रैल 2019 के पुरस्कार की वैधता, विधिकता तथा शुद्धता से संबंधित एक समान प्रश्न उठाया गया था।

11. दिनांक 22 अप्रैल 2019 के पुरस्कार की वैधता के संबंध में माननीय एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए निष्कर्षों पर विचार करने से पूर्व, उक्त पुरस्कार के कुछ अंशों को उद्धृत करना उपयुक्त होगा, जो इस प्रकार हैं:

"14. <u>भूमि का मूल्यांकन:</u>

दिनांक 29/01/2003 की अधिसूचना, जो सर्वेक्षण संख्या भूमि के संबंध में धारा 28(1) के अंतर्गत जारी की गई, के अनुसार उपर्युक्त विक्रय आँकड़ों के आधार पर मूल्य रु. 2,90,532/- प्रति एकड़ है तथा मार्गदर्शक मूल्य रु. 6.00 लाख है। अतः यदि मार्गदर्शक मूल्य रु. 6.00 लाख, अन्य सभी भत्तों सहित लिया जाए, तो यह दर वास्तविक एवं न्यायोचित पाई जाएगी। तदनुसार, दिनांक 05/07/2018 को पुरस्कार निर्धारित कर अनुमोदन हेतु प्रस्तुत किया गया।

मुख्य कार्यकारी अधिकारी एवं कार्यकारी सदस्य ने पत्र संख्या केआईएडीबी/सी.ई.ओ. एवं ई.एम/16/2019-20 दिनांक 16/04/2019 द्वारा पत्र लिखा। उक्त पत्र के साथ सरकार का पत्र तथा महाधिवक्ता का मत संलग्न है, जिसमें यह सुझाव दिया गया है कि महाधिवक्ता द्वारा दिए गए मत के अनुसार संशोधित पुरस्कार तैयार कर अनुमोदन हेतु प्रस्तुत किया जाए। इस संबंध में इस कार्यालय द्वारा पत्र सं. केआईएडीबी/बीएमआईसीपी/ एल.ए.क्यू.(1)/ जी.आई/01/2019-20 दिनांक 22/04/2019 विशेष उपायुक्त, केआईएडीबी (बीएमआईसीपी) को अन्य बिंदुओं पर स्पष्टीकरण हेतु लिखा गया, जिसमें यह कहा गया कि वर्तमान निर्णय में संशोधन की कोई संभावना नहीं है। दिनांक 22/04/2019 को मुख्य कार्यकारी अधिकारी एवं कार्यकारी सदस्य के पत्र सं. केआईएडीबी/बीएमआईसीपी/ एल.ए.क्यू/ सी. आर/31/2013-14 दिनांक 22/04/2019 के अनुसार यह कहा गया कि महाधिवक्ता के मत के अनुसार तथा भूमि अधिग्रहण मामलों में प्रतिकर दर/पुरस्कार निर्धारण के संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व निर्णयों के आधार पर पुनः प्रस्तुत करने का सुझाव दिया गया है तथा बीएमआईसीपी योजना हेतु अधिग्रहित भूमि के संबंध में भी नियमों के अनुसार तत्काल संशोधित निर्णय तैयार कर सरकार की स्वीकृति हेतु प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया है। **पुरस्कार में संशोधन करने तथा प्रारंभिक अधिसूचना पर विचार न करने के संबंध में महाधिवक्ता ने**

> **"केआईएडीबी तथा राज्य के पास कोई विकल्प नहीं है, सिवाय इसके कि ऐसा पुरस्कार पारित किया जाए जिसमें संपत्ति के बाजार मूल्य को वर्तमान तिथि के अनुसार ध्यान**

अपने दिनांक 16/04/2019 के विधिक मत में निम्नलिखित मत व्यक्त किया है:

वर्तमान महाधिवक्ता द्वारा दिए गए मत के अनुसार, पुरस्कार वर्तमान बाजार दर के समकक्ष निर्धारित किया जाना है। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विभिन्न मामलों में, जहाँ प्रारंभिक अधिसूचना जारी की गई, अंतिम अधिसूचना पारित की गई तथा परिसंपत्तियाँ दावा विभाग को सौंप दी गईं, किन्तु दस वर्षों तक कोई पुरस्कार पारित नहीं किया गया, ऐसे मामलों में अन्याय से बचने हेतु भूमिधारकों को वास्तविक एवं न्यायोचित प्रतिकर प्रदान करना उपयुक्त माना है, और ऐसे मामलों में प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि को परिसंपत्तियों के हस्तांतरण की तिथि तक परिवर्तित किया जाना चाहिए, जो उस समय प्रचलित थी। आदेश यह है कि बाजार दर को ध्यान में रखते हुए निर्णय निर्मित किया जाए। इस संबंध में निम्नलिखित सर्वोच्च न्यायालय के सिविल अपील मामलों का अवलोकन किया गया:

1. सिविल अपील सं. 7015-7018/2005 (सक्षम प्राधिकारी बनाम बारानगर जूट फैक्ट्री और अन्य)

2. विशेष अनुमति याचिका (सिविल) सं. 1787473/2004 (मध्य प्रदेश राज्य बनाम ओंकार प्रसाद पटेल)

3. सिविल अपील सं. 965/1979 सहित सिविल अपील सं. 3325/1984, 2185-87/1980, 2381/1980, विशेष अनुमति याचिका सं. 12352-53/1984, 10572-74/1984 एवं अन्य (गौरी शंकर गौर एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य)

4. सिविल अपील सं. 2739/2000 सहित सं. 2737/2000, 2738/2000, 2736/2000, अवमानना याचिका (सिविल) सं. 62/1999 (हाजी सईद खान एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य)।

उपरोक्त मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह आदेश दिया है कि जहाँ निर्णय में अत्यधिक विलंब हुआ है, वहाँ प्रारंभिक अधिसूचना

की तिथि को परिसंपत्ति हस्तांतरण की तिथि या न्यायसंगत राहत प्रदान करने हेतु उपयुक्त तिथि तक परिवर्तित किया जाए।

उपरोक्त सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों के आधार पर, वर्तमान मामले में भूमि का कब्जा दिनांक 05/04/2004, 22/11/2005 तथा 25/11/2005 को सौंपा गया था, और यदि वर्ष 2011 की मार्गदर्शक दरों के आधार पर पुरस्कार निर्धारित किया जाए, तो भूमिधारकों को वास्तविक एवं न्यायोचित प्रतिकर प्रदान करना संभव नहीं है।

अतः, भूमिधारकों को वास्तविक एवं न्यायोचित प्रतिकर प्रदान करने के उद्देश्य से, प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि को वर्ष 2011 तक स्थगित करने तथा उक्त वर्ष में प्रचलित मार्गदर्शक दरों के आधार पर महाधिवक्ता द्वारा दिए गए विधिक मत के अनुसार पुरस्कार निर्धारित करने का निर्णय लिया गया।"

(जोर दिया गया)

12. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि प्रबुद्ध महाधिवक्ता ने दिनांक 16 अप्रैल 2019 को एक मत प्रदान किया, जिसमें यह कहा गया कि पुरस्कार पारित करते समय अत्यधिक विलंब के कारण वर्तमान तिथि के अनुसार बाजार मूल्य को ध्यान में रखा जाना चाहिए। केआईएडीबी ने उक्त मत को विशेष उपायुक्त (बीएमआईसीपी) तथा एसएलएओ को अग्रेषित करते हुए उन्हें उक्त मत के अनुसार पुरस्कार पारित करने का निर्देश दिया। दिनांक 22 अप्रैल 2019 को, एसएलएओ ने विशेष उपायुक्त (बीएमआईसीपी) को पत्र लिखकर नवीन पुरस्कार पारित करने तथा पूर्व में उनके द्वारा पारित पुरस्कारों, जो दिनांक 3 नवम्बर 2018 को अनुमोदन हेतु भेजे गए थे, के आलोक में प्रतिकर की गणना के संबंध में कुछ प्रश्न उठाए। उक्त पत्रों के प्रत्युत्तर में, केआईएडीबी के मुख्य कार्यकारी अधिकारी ने पुनः दिनांक 22 अप्रैल 2019 को विशेष उपायुक्त (बीएमआईसीपी) तथा एसएलएओ को पत्र लिखकर उन्हें प्रबुद्ध महाधिवक्ता के मत के अनुसार पुरस्कार पारित करने का निर्देश दिया।

13. यह भी देखा जा सकता है कि प्रबुद्ध महाधिवक्ता का मत तथा पुरस्कार में संदर्भित इस न्यायालय के निर्णय ही वे *केवल* दो कारक थे, जिन्हें प्रतिवादी सं. 4 (एसएलएओ) द्वारा दिनांक 22 अप्रैल 2019 के पुरस्कार को पारित करने के उद्देश्य से ध्यान में रखा गया,

जिसमें प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि को वर्ष 2011 तक परिवर्तित/स्थगित किया गया तथा उक्त वर्ष में प्रचलित मार्गदर्शक दरों को विचार में लिया गया।

14. प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि के *स्वप्रेरणा* से परिवर्तन/स्थगन से व्यथित होकर, परियोजना प्रवर्तकों, जिन्हें इसके परिणामस्वरूप अधिक प्रतिकर का भुगतान करना पड़ रहा था, ने उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका दायर की। यहाँ अपीलकर्त्ताओं ने परियोजना प्रवर्तकों द्वारा दायर रिट याचिका में पक्षकार बनाए जाने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया, साथ ही पूर्वोक्त प्रार्थनाओं सहित एक स्वतंत्र रिट याचिका भी दायर की। उनकी आपत्ति द्विविध थी–एक, पुरस्कार को *निरस्त* करना तथा दो, पुरस्कार पारित करने की तिथि के निकटतम भूमि के बाजार मूल्य के अनुसार पुरस्कार पारित करने का *निर्देश देना।*

15. दिनांक 22 अप्रैल 2019 के पुरस्कार को निरस्त करने संबंधी सामान्य प्रार्थना के संदर्भ में, उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 18 अप्रैल 2022 को पारित निर्णय एवं आदेश के निम्नलिखित अनुच्छेदों का उल्लेख करना उपयुक्त होगा:

> "17.8 आक्षेपित पुरस्कारों के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि प्रबुद्ध महाधिवक्ता का मत तथा पुरस्कारों में संदर्भित सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय ही वे दो कारक थे, जिन्हें एसएलएओ द्वारा पुरस्कार पारित करने के उद्देश्य से ध्यान में रखा गया। जैसा कि पूर्वोक्त है, **जहाँ तक प्रबुद्ध महाधिवक्ता के मत का संबंध है, जो प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि से भूमि के बाजार मूल्य का निर्धारण करने के स्थान पर उसे किसी पश्चात तिथि तक परिवर्तित करने से संबंधित है, उक्त मत उनके समक्ष प्रस्तुत प्रश्न की सीमा और परिधि से परे था और परिणामस्वरूप, उक्त मत को एसएलएओ द्वारा आक्षेपित पुरस्कार पारित करने का आधार नहीं बनाया जा सकता था।**
>
> X–X –X –X –X –X –X
>
> 17.10 दूसरा कारक/परिस्थिति, जिसे एसएलएओ द्वारा भूमि के बाजार मूल्य के निर्धारण की तिथि को प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि से किसी पश्चात तिथि तक परिवर्तित करने हेतु ध्यान में रखा गया, वह सर्वोच्च न्यायालय के निम्नलिखित निर्णयों पर निर्भरता थी, अर्थात्:

a. *सक्षम प्राधिकारी बनाम बारांगोर जूट फैक्ट्री सहपठित मध्य प्रदेश राज्य बनाम ओंकार प्रसाद पटेल - (2005) 13 एस.सी.सी 47*

b. *गौरीशंकर गौर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य - (1994) 1 एस.सी.सी 92; तथा*

c. *हाजी सईद खान बनाम उत्तर प्रदेश राज्य - (2001) 9 एस.सी.सी 513."*

17.11 इस संदर्भ में यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि उपर्युक्त निर्णयों तथा सर्वोच्च न्यायालय एवं इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों, जिनका दोनों पक्षों द्वारा पूर्व में उल्लेख किया गया है, से यह स्पष्ट होता है कि **अधिग्रहित भूमि का बाजार मूल्य भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 की धारा 11 के अंतर्गत परिकल्पित प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि के अनुसार ही लिया जाना चाहिए; यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अपवादात्मक परिस्थितियों में, जहाँ सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अधिग्रहण कार्यवाही स्वयं ही अधिग्रहण प्रक्रिया/प्रक्रिया में कुछ अवैधताओं या त्रुटियों के कारण निरस्त किए जाने योग्य है, वहाँ केवल सर्वोच्च न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 32/142 के अंतर्गत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए अथवा उच्च न्यायालयों को संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए तिथि को किसी पश्चात/परवर्ती तिथि तक परिवर्तित करने की अनुमति होती है; तथापि, तिथि परिवर्तित करने की यह शक्ति केवल सर्वोच्च न्यायालय अथवा उच्च न्यायालयों को ही उपलब्ध है और निश्चित रूप से एसएलएओ अथवा राज्य सरकार को नहीं; अन्य शब्दों में, उपर्युक्त निर्णयों के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि जिन मामलों में सर्वोच्च न्यायालय अथवा इस न्यायालय ने पूर्ण तथा वास्तविक न्याय प्रदान करने हेतु तिथि परिवर्तित करना आवश्यक समझा, वहाँ न्यायालयों की अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग किया गया और तिथियों को इस प्रकार परिवर्तित किया गया कि भूमिधारकों को कोई कठिनाई, हानि या पूर्वाग्रह न हो।**

> 17.12 एसएलएओ द्वारा आक्षेपित पुरस्कारों में जिन निर्णयों पर निर्भर किया गया है, उनका अवलोकन करने से यह स्पष्ट होता है कि उन मामलों में सर्वोच्च न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अंतर्गत अपनी असाधारण अधिकारिता एवं शक्तियों का प्रयोग करते हुए, उन मामलों के विशेष तथ्यों एवं परिस्थितियों में, बाजार मूल्य निर्धारण हेतु तिथि परिवर्तित की थी। **एसएलएओ द्वारा इन सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों पर निर्भर करते हुए प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि से तिथि परिवर्तित करने में स्पष्ट त्रुटि की गई, क्योंकि उन्होंने यह नहीं समझा कि एसएलएओ अथवा राज्य सरकार द्वारा तिथि का ऐसा परिवर्तन विधि के अनुसार न तो भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 के प्रावधानों के अंतर्गत, न ही के.आई.ए.डी अधिनियम अथवा नियमों के अंतर्गत, और न ही किसी न्यायिक दृष्टांत के आधार पर अनुमेय है।** यह भी उल्लेखनीय है कि उपर्युक्त निर्णयों के अनुसार भी, प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि से किसी पश्चात/परवर्ती तिथि तक परिवर्तन केवल भूमिधारकों से कब्जा लिए जाने की तिथि तक ही किया गया था। वर्तमान मामले में, आक्षेपित पुरस्कारों से यह स्पष्ट होता है कि एसएलएओ ने तिथि को कब्जा लिए जाने की तिथि से भी आगे की तिथि तक परिवर्तित किया है। इन परिस्थितियों में यह स्पष्ट है कि आक्षेपित पुरस्कार, जो तिथि परिवर्तन का आशय रखते हैं, अनेक विधिक एवं तथ्यात्मक त्रुटियों तथा अवैधताओं से ग्रस्त हैं, जो उन्हें दूषित करती हैं और इस आधार पर भी उन्हें निरस्त किया जाना आवश्यक है।”
>
> (जोर दिया गया)

16. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के मूल्यांकन के पश्चात यह मत व्यक्त किया कि जहाँ तक प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि को किसी पश्चात तिथि तक परिवर्तित करने के संबंध में प्रबुद्ध महाधिवक्ता के मत का प्रश्न है, वह उनके समक्ष प्रस्तुत प्रश्न की सीमा एवं परिधि से परे था और परिणामस्वरूप एसएलएओ द्वारा पुरस्कार पारित करने का आधार नहीं बनाया जा सकता था। यह भी स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश ने 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम, के.आई.ए.डी अधिनियम तथा इस न्यायालय के विभिन्न

निर्णयों पर विचार करते हुए यह अभिमत व्यक्त किया कि अधिग्रहित भूमि का बाजार मूल्य 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 11 के अनुसार प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि के अनुसार ही लिया जाना चाहिए। आगे यह भी अभिमत व्यक्त किया गया कि केवल अपवादात्मक परिस्थितियों में, जहाँ यह न्यायालय अथवा उच्च न्यायालय यह निष्कर्ष निकाले कि अधिग्रहण कार्यवाही स्वयं ही अवैधताओं अथवा त्रुटियों के कारण निरस्त किए जाने योग्य है, तभी यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 32/142 के अंतर्गत अथवा उच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए तिथि को किसी पश्चात तिथि तक परिवर्तित कर सकते हैं। यह भी अभिमत व्यक्त किया गया कि तिथि परिवर्तित करने की यह शक्ति केवल इस न्यायालय अथवा उच्च न्यायालय को ही उपलब्ध है, न कि एसएलएओ अथवा राज्य सरकार को।

17. हम उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश के निष्कर्षों से सहमत हैं, क्योंकि एसएलएओ प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि को परिवर्तित/स्थगित नहीं कर सकता। यदि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के मूल्यांकन के पश्चात यह न्यायालय अथवा उच्च न्यायालय अपवादात्मक परिस्थितियों में इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि अधिग्रहण कार्यवाही स्वयं ही निरस्त किए जाने योग्य है, तभी यह न्यायालय अनुच्छेद 32/142 के अंतर्गत अथवा उच्च न्यायालय अनुच्छेद 226 के अंतर्गत अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि को किसी पश्चात तिथि तक परिवर्तित/स्थगित कर सकते हैं। अतः हमारे विचार में, उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश ने दिनांक 22 अप्रैल 2019 के पुरस्कार को निरस्त एवं अपास्त करने का जो निष्कर्ष निकाला, वह उचित है।

18. इस प्रकार निर्णय लेने के पश्चात, परियोजना प्रवर्तकों द्वारा दायर रिट याचिकाओं में, उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि यहाँ अपीलकर्ताओं द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष दायर रिट याचिका विचारार्थ शेष नहीं रहती और तदनुसार उसका *निस्तारण कर दिया गया।*

19. उक्त से व्यथित होकर, यहाँ अपीलकर्ताओं ने उच्च न्यायालय की खंडपीठ के समक्ष आंतरिक अपील के रूप में रिट अपील सं. 678/2022 (एल.ए-केआईएडीबी) दायर की।

20. उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने दिनांक 22 नवम्बर 2022 के आक्षेपित निर्णय एवं आदेश द्वारा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के विचार के पश्चात, अनुच्छेद 9 में निम्नलिखित अवलोकन किया:

> "9. आगे, माननीय एकल न्यायाधीश ने यह अभिमत व्यक्त किया कि एसएलएओ को भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 की धारा 11 के अनुसार प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि के अनुसार ही प्रतिकर का निर्धारण करना है, न कि तिथि को किसी पश्चात/परवर्ती तिथि तक परिवर्तित करना है। माननीय एकल न्यायाधीश ने एसएलएओ द्वारा पारित पुरस्कार को निरस्त कर एसएलएओ को पुनर्विचार कर नया पुरस्कार पारित करने का निर्देश दिया है। **याचिकाकर्ता की तिथि को किसी पश्चात तिथि तक परिवर्तित करने संबंधी आपत्ति केवल तब विचारणीय होगी जब एसएलएओ द्वारा पुरस्कार पारित किया जाएगा। एसएलएओ द्वारा अभी पुरस्कार पारित किया जाना शेष है। इस रिट अपील में उठाया गया याचिकाकर्ता का विवाद अकालिक है। यदि याचिकाकर्ता एसएलएओ द्वारा पारित किए जाने वाले पुरस्कार से असंतुष्ट है, तो उसे उपयुक्त मंच के समक्ष उपयुक्त कार्यवाही में इस अपील में उठाए गए आधारों को उठाने की स्वतंत्रता प्रदान की जाती है।** प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि से किसी अन्य तिथि तक परिवर्तन का प्रश्न केवल पुरस्कार पारित होने के पश्चात ही उत्पन्न होगा। उक्त मुद्दा उठाने का कारण-कार्रवाई याचिकाकर्ता के लिए केवल पुरस्कार पारित होने के पश्चात ही उत्पन्न होगा। तिथि को किसी पश्चात/परवर्ती तिथि तक परिवर्तित करने की शक्ति केवल माननीय सर्वोच्च न्यायालय तथा इस न्यायालय को ही उपलब्ध है, न कि एसएलएओ अथवा राज्य सरकार को..."
>
> (जोर दिया गया)

21. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने रिट अपील को इस आधार पर *निरस्त किया* कि माननीय एकल न्यायाधीश ने एसएलएओ द्वारा पारित पुरस्कार को निरस्त कर एसएलएओ को पुनर्विचार कर नया पुरस्कार पारित करने का निर्देश दिया है, और इस कारण तिथि को किसी पश्चात/परवर्ती तिथि तक परिवर्तित करने संबंधी आपत्ति केवल तभी विचारणीय होगी जब एसएलएओ द्वारा पुरस्कार पारित किया जाएगा। अतः उच्च न्यायालय की खंडपीठ का मत था कि रिट अपील में उठाई गई आपत्ति *अकालिक* है तथा प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि को किसी अन्य तिथि तक परिवर्तित करने का प्रश्न केवल पुरस्कार पारित होने के पश्चात ही उत्पन्न होगा।

22. वर्तमान अपील में, अपीलकर्त्ताओं के प्रबुद्ध अधिवक्ता द्वारा यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि रिट अपील अकालिक नहीं थी, क्योंकि भूमि के बाजार मूल्य के निर्धारण हेतु तिथि को प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि के स्थान पर पुरस्कार की तिथि के अनुसार परिवर्तित करने का निवेदन माननीय एकल न्यायाधीश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था, और इस प्रकार यह मुद्दा अपीलकर्त्ताओं के विरुद्ध निर्णीत हो चुका था, जिसके परिणामस्वरूप कारण-कार्रवाई विद्यमान रही।

23. हमारा मत है कि अपीलकर्त्ताओं के प्रबुद्ध अधिवक्ता का उक्त तर्क स्वीकार किए जाने योग्य है। ऐसा इसलिए कहा जा रहा है क्योंकि परियोजना प्रवर्तकों द्वारा दायर रिट याचिकाओं के निस्तारण के पश्चात, उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि दिनांक 22 अप्रैल 2019 का पुरस्कार निरस्त एवं अपास्त किया जाना चाहिए और तदनुसार आदेश पारित किया गया। तथापि, प्रचलित विधिक स्थिति पर विचार करते हुए माननीय एकल न्यायाधीश ने यह भी निर्देश दिया कि एसएलएओ को प्रतिकर का निर्धारण प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि के अनुसार करना होगा, न कि तिथि को किसी पश्चात/परवर्ती तिथि तक परिवर्तित करना होगा। अतः माननीय एकल न्यायाधीश ने संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए दिनांक 22 अप्रैल 2019 के पुरस्कार को निरस्त किया, परंतु प्रारंभिक अधिसूचना की तिथि को किसी पश्चात/परवर्ती तिथि तक परिवर्तित/स्थगित करने संबंधी अपीलकर्त्ताओं को कोई राहत प्रदान नहीं की। अतः हमारे विचार में, यहाँ अपीलकर्त्ताओं द्वारा दायर रिट याचिका की प्रार्थना (बी) के संबंध में कारण-कार्रवाई अभी भी विचारार्थ शेष है। उच्च न्यायालय की खंडपीठ को, विशेषतः वर्तमान मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, कम से कम उक्त प्रार्थना के संबंध में अपीलकर्त्ताओं के मामले पर विचार करना चाहिए था। अतः हमारा मत है कि उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित दिनांक 22 नवम्बर 2022 का आक्षेपित निर्णय एवं आदेश केवल इस आधार पर ही निरस्त एवं अपास्त किया जाना चाहिए। तदनुसार आदेशित किया जाता है।

24. उपर्युक्त आधार पर उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय एवं आदेश को निरस्त करने के पश्चात, अब यह परीक्षण करना आवश्यक है कि यहाँ अपीलकर्त्ताओं द्वारा रिट याचिका की प्रार्थना (बी) में मांगी गई राहत प्रदान की जानी चाहिए या नहीं।

25. यहाँ अपीलकर्त्ताओं द्वारा मांगी गई राहत के परीक्षण हेतु, इस न्यायालय के कुछ निर्णयों का उल्लेख करना उपयुक्त होगा, जिन पर पक्षकारों के प्रबुद्ध अधिवक्ताओं द्वारा निर्भरता रखी गई है।

26. ***राम चंद*** (उपर्युक्त) के मामले में, भूमि अधिग्रहण कार्यवाही को निरस्त करने हेतु कार्यवाही प्रारंभ की गई थी, जो वर्ष 1959 से 1965 के बीच भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 की धारा 4 के अंतर्गत अधिसूचनाएँ जारी कर प्रारंभ की गई थी, किन्तु जिनमें वर्ष 1979-80 तक कोई पुरस्कार पारित नहीं किया गया था, यद्यपि धारा 6 के अंतर्गत घोषणाएँ वर्ष 1966 एवं 1969 में की गई थीं। उक्त मामले में इस न्यायालय के समक्ष यह प्रश्न था कि यदि किसी व्यक्ति को वर्ष 1980/81 में *बीस वर्ष पूर्व प्रचलित* बाजार दर पर प्रतिकर दिया जाए, तो क्या यह संवैधानिक एवं वैधानिक अनिवार्यता के अनुरूप होगा। इस संदर्भ में इस न्यायालय ने निम्नलिखित अवलोकन किया:

> **"14. … भूमि के बाजार मूल्य में वृद्धि, विशेष रूप से शहरी समूहों या महानगरों के निकट स्थित क्षेत्रों में, की अनदेखी करना भूकंप की अनदेखी करने के समान होगा और न्यायालय इस तथ्य का न्यायिक संज्ञान अवश्य ले सकते हैं।** अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत देय ब्याज तथा सांत्वना राशि भूमि के बाजार मूल्य से जुड़ी होती है, जो धारा 4(1) के अंतर्गत अधिसूचना की तिथि के संदर्भ में निर्धारित होती है। **यदि वर्ष 1966 में ही धारा 6 के अंतर्गत घोषणा जारी कर यह निर्णय लिया गया था कि विभिन्न कृषकों की भूमि, जो खेती की सीमा के भीतर थी, सार्वजनिक प्रयोजन हेतु आवश्यक है, तो प्रतिवादियों को अधिग्रहण कार्यवाही को पूर्ण करने तथा शीघ्र प्रतिकर का भुगतान करने हेतु कदम उठाने चाहिए थे।** वर्तमान मामलों में, जब तक प्रतिवादियों की ओर से कोई औचित्य प्रस्तुत नहीं किया जाता, क्या यह कहा जा सकता है कि धारा 11 के अंतर्गत पुरस्कार पारित करने की वैधानिक शक्ति का प्रयोग धारा 6 की घोषणा की तिथि से उचित समय के भीतर किया गया है? **भूमि के मूल्यों में वृद्धि, विशेषकर इस क्षेत्र में, पिछले दो दशकों के दौरान, वास्तविकता में धारा 4(1) की अधिसूचना की तिथि का बाजार मूल्य उस दर का केवल एक अंश मात्र है, जो पुरस्कार के समय प्रचलित थी।"**
>
> (जोर दिया गया)

27. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि उक्त मामले में इस न्यायालय ने यह अवलोकन किया कि प्रतिवादियों को अधिग्रहण कार्यवाही को पूर्ण करने तथा प्रतिकर के भुगतान हेतु शीघ्र कदम उठाने चाहिए थे। यह भी अवलोकन किया गया कि भूमि के मूल्यों में वृद्धि

के कारण, विशेष रूप से संबंधित क्षेत्र में, पिछले दो दशकों के दौरान, 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 4(1) की अधिसूचना की तिथि का बाजार मूल्य वास्तव में उस दर का केवल एक अंश मात्र है, जो पुरस्कार के समय प्रचलित होती है। तथापि, उक्त मामले में यह न्यायालय स्वयं अधिग्रहण कार्यवाही को चुनौती से भी संबंधित था। इस संदर्भ में इस न्यायालय ने निम्नलिखित अवलोकन किया:

> "**16.** प्रतिवादियों की ओर से यह कहा गया कि याचिकाकर्ताओं ने इस न्यायालय का दरवाजा केवल पुरस्कार पारित होने के पश्चात या जब पुरस्कार पारित होने वाले थे, तब खटखटाया, और धारा 6 के अंतर्गत घोषणाओं के पश्चात चौदह वर्षों से अधिक समय तक उच्च न्यायालय के अनुच्छेद 226 अथवा इस न्यायालय के अनुच्छेद 32 के अंतर्गत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं किया। **यह सत्य है कि इस न्यायालय ने याचिकाकर्ताओं की ओर से विलंब को ध्यान में रखा है, जब उन्होंने भूमि अधिग्रहण कार्यवाही को निरस्त करने हेतु उच्च न्यायालय या इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं किया, इस आधार पर कि अधिग्रहण कार्यवाही एक दशक से अधिक समय तक लंबित रही, जैसे कि *अफ़लातून बनाम दिल्ली के उपराज्यपाल* [(1975) 4 एससीसी 285] तथा *रामजस फाउंडेशन बनाम भारत संघ* [1993 अनुपूरक (2) एससीसी 20 : एआईआर 1993 एससी 852] के मामलों में।** हमारे मत में, उच्च न्यायालय के अनुच्छेद 226 अथवा इस न्यायालय के अनुच्छेद 32 के अंतर्गत अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में विलंब के प्रश्न का विचार उन प्राधिकारियों की निष्क्रियता के साथ किया जाना चाहिए, जिन्हें अपने वैधानिक कर्तव्यों का पालन करना था। क्या कोई वैधानिक प्राधिकारी यह तर्क दे सकता है कि यद्यपि उसने अपने कर्तव्यों का पालन उचित समय के भीतर नहीं किया, तथापि इसका कोई महत्व नहीं है क्योंकि जिस व्यक्ति के अधिकारों का हनन हुआ है, उसने भी उच्च न्यायालय या इस न्यायालय के समक्ष उपयुक्त राहत हेतु याचिका दायर नहीं की? संबंधित अधिनियम के अंतर्गत प्राधिकारियों पर यह दायित्व है कि वे अपने कर्तव्यों का पालन उचित समय के भीतर करें और इस प्रकार वे न्यायालय के प्रति उत्तरदायी हैं कि उन्होंने अपने कर्तव्यों का पालन क्यों नहीं किया, जिससे दावा करने वालों को क्षति

> हुई। **धारा 6 के अंतर्गत घोषणाओं के पश्चात लंबे समय तक अधिग्रहण कार्यवाही की वैधता को चुनौती न देने के कारण, अधिग्रहण कार्यवाही को निरस्त करने की राहत अनुपयुक्त हो गई है, क्योंकि इस बीच अधिसूचित भूमि का विकास हो चुका है और उसे सार्वजनिक उपयोग में लाया जा चुका है। भूमि का उपयोग हजारों लोगों को आवास प्रदान करने तथा एक योजनाबद्ध नगर के निर्माण के लिए किया जा रहा है, जो वर्तमान परिस्थिति में आवश्यक है। व्यापक लोकहित को उचित महत्व दिया जाना चाहिए। इसी कारण यह न्यायालय भूमि स्वामियों द्वारा अधिग्रहण कार्यवाही को निरस्त करने के प्रयासों का विरोध करता रहा है, जो कार्यवाही के पूर्ण होने में विलंब के आधार पर किए गए हैं।** परंतु, क्या प्रतिवादियों को उन याचिकाकर्ताओं को प्रतिकर देने हेतु निर्देशित नहीं किया जा सकता, जो छोटे कृषक थे और दिल्ली के आसपास स्थित भूमि के स्वामी थे, उन्हें हुई क्षति के लिए, जो अधिनियम के प्रावधानों के कारण नहीं, बल्कि प्राधिकारियों द्वारा वैधानिक शक्तियों का उचित समय के भीतर प्रयोग न करने के कारण हुई?"
>
> (जोर दिया गया)

28. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि उपर्युक्त मामले में इस न्यायालय ने यह अवलोकन किया कि 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 6 के अंतर्गत घोषणाएँ किए जाने के पश्चात लंबे समय तक अधिग्रहण कार्यवाही की वैधता को चुनौती न देने के कारण, अधिग्रहण कार्यवाही को निरस्त करने की राहत अनुपयुक्त हो गई है, क्योंकि इस बीच अधिसूचित भूमि का विकास हो चुका है और उसे सार्वजनिक उपयोग में लाया जा चुका है। आगे यह भी अवलोकन किया गया कि उक्त भूमि का उपयोग हजारों लोगों को आवास प्रदान करने तथा एक योजनाबद्ध नगर योजना के क्रियान्वयन हेतु किया जा रहा है, जो वर्तमान परिस्थितियों में अत्यंत आवश्यक है, और इस प्रकार व्यापक लोकहित को उचित महत्व दिया जाना चाहिए।

29. अंततः, इस न्यायालय ने उक्त मामले के अनुच्छेद 27 में, लोकहित को ध्यान में रखते हुए, अधिग्रहण कार्यवाही को निरस्त करने के स्थान पर यह निर्देश दिया कि वहाँ के याचिकाकर्ताओं को अतिरिक्त प्रतिकर की राशि प्रदान की जाए, जिसकी गणना 23 अगस्त 1974 से दो वर्ष की अवधि समाप्त होने के पश्चात से लेकर कलेक्टर द्वारा पुरस्कार

पारित किए जाने की तिथि तक, प्रति वर्ष 12% की दर से की जाए, और यह गणना 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 4(1) के अंतर्गत अधिसूचना की तिथि पर संबंधित भूमि के बाजार मूल्य के संदर्भ में की जाए।

30. ***हाजी सईद खान एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य*** [5] के मामले में, मुरादाबाद विकास प्राधिकरण द्वारा मुरादाबाद जनपद के धीमरी परगना ग्राम में "नियोजित विकास योजना" के अंतर्गत आवासीय कॉलोनी के निर्माण हेतु भूमि अधिग्रहित की गई थी। उक्त मामले में भूमि अधिग्रहण कार्यवाही को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई, जिसे निरस्त कर दिया गया। इससे व्यथित होकर, इस न्यायालय को उक्त *वाद* का निर्णय करने हेतु बुलाया गया। इस न्यायालय ने उक्त मामले के विशिष्ट तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, *मामले का गुण-दोष पर निर्णय करने के स्थान पर* दोनों पक्षों के अधिवक्ताओं को यह सुझाव दिया कि न्याय के हित में यह उचित होगा कि संपत्ति के बाजार मूल्य का निर्धारण 15 जून 1998, अर्थात कब्जा लिए जाने की तिथि को, 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 4(1) के अंतर्गत अधिसूचना की तिथि मानकर किया जाए, बजाय वास्तविक अधिसूचना की तिथि अर्थात 30 मार्च 1995 के। जब यह सुझाव पीठ द्वारा दिया गया, तो दोनों पक्षों के अधिवक्ताओं ने उसे स्वीकार कर लिया। तदनुसार, इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के निर्णय एवं आदेश को इस सीमित संशोधन के साथ अनुमोदित किया *कि* धारा 4(1) की अधिसूचना की तिथि को कब्जा लिए जाने की तिथि तक परिवर्तित माना जाएगा, और इस प्रकार भूमि अधिग्रहण कार्यवाही को यथावत रखा गया।

31. ***बारांगोर जूट फैक्ट्री*** (उपर्युक्त) के मामले में, इस न्यायालय के समक्ष अपीलों का विषय केंद्रीय सरकार द्वारा राष्ट्रीय राजमार्ग अधिनियम, 1956 (आगे "एन.एच. अधिनियम") की धारा 3-ए के अंतर्गत दिनांक 11 जून 1998 की अधिसूचना द्वारा कुछ भूमि का अनिवार्य अधिग्रहण था। भूमिधारकों ने अपनी भूमि के अधिग्रहण को विभिन्न आधारों पर कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी। उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने दिनांक 7 अप्रैल 2004 के निर्णय एवं आदेश द्वारा रिट याचिका का *निस्तारण करते हुए* यह अभिमत व्यक्त किया कि अनिवार्य अधिग्रहण संबंधी आक्षेपित अधिसूचना विधि के विरुद्ध है, तथापि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अधिग्रहित भूमि का कब्जा प्राधिकारियों द्वारा पहले ही लिया जा चुका है, उच्च न्यायालय ने यह पाया कि अधिसूचना को निरस्त करने से *कोई उपयोगी उद्देश्य* सिद्ध नहीं होगा। उच्च न्यायालय ने अधिग्रहण प्राधिकारी की उस शक्ति का भी संज्ञान लिया कि वह भूमि अधिग्रहण हेतु नई अधिसूचना जारी कर

सकता है, जिससे भूमिधारकों को देय प्रतिकर की राशि में संभावित वृद्धि हो सकती है। इन पहलुओं को ध्यान में रखते हुए, यह आदेश दिया गया कि भूमि स्वामियों को अतिरिक्त मुआवजे की राशि (जो पूर्व में निर्धारित मुआवजे के ऊपर 30% की दर से गणना की गई) प्रदान की जाए। कोलकाता उच्च न्यायालय के निर्णय एवं आदेश से व्यथित होकर, इस न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति के माध्यम से तीन अपीलें दायर की गईं। पहली अपील सक्षम प्राधिकारी द्वारा अधिग्रहण अधिसूचना की वैधता के संबंध में दायर की गई, दूसरी अपील भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण (जिसे आगे "एन.एच.ए.आई" कहा गया है) *द्वारा* भूमि स्वामियों को अतिरिक्त मुआवजा प्रदान किए जाने के संबंध में दायर की गई, और तीसरी अपील भूमि स्वामियों *द्वारा* इस आधार पर दायर की गई कि अधिग्रहण अधिसूचना को अवैध घोषित किए जाने के बावजूद उसे निरस्त नहीं किया गया।

32. उक्त मामले में भूमि का अधिग्रहण एन.एच. अधिनियम के अंतर्गत किया गया था। *भूमि अधिग्रहण की शक्ति* एन.एच. अधिनियम की धारा 3-ए में निहित है। धारा 3-ए की उपधारा (1) के अनुसार, जब केंद्रीय सरकार यह संतुष्ट हो जाती है कि किसी सार्वजनिक प्रयोजन हेतु किसी राष्ट्रीय राजमार्ग या उसके किसी भाग के निर्माण, अनुरक्षण, प्रबंधन अथवा संचालन के लिए भूमि आवश्यक है, तो वह राजपत्र में अधिसूचना प्रकाशित कर ऐसी भूमि के अधिग्रहण का अपना अभिप्राय घोषित कर सकती है। धारा 3-ए की उपधारा (2) के अनुसार, उपधारा (1) के अंतर्गत प्रत्येक अधिसूचना में भूमि का संक्षिप्त विवरण दिया जाना आवश्यक है। धारा 3-ए की उपधारा (3) के अनुसार, सक्षम प्राधिकारी को अधिसूचना के सार को दो स्थानीय समाचार पत्रों में प्रकाशित कराना आवश्यक है, जिनमें से एक स्थानीय भाषा में होना चाहिए। उक्त मामले में अधिग्रहण अधिसूचना को इस आधार पर चुनौती दी गई कि उसमें अनिवार्य रूप से अधिग्रहित की जाने वाली भूमि का संक्षिप्त विवरण नहीं दिया गया है। इस न्यायालय ने अधिग्रहण अधिसूचना का परीक्षण करते हुए निम्नलिखित अवलोकन किया:

> **"5.** ...जहाँ तक यह प्रश्न है कि क्या आक्षेपित अधिसूचना अधिनियम की धारा 3-ए(1) के अंतर्गत भूमि का संक्षिप्त विवरण देने की आवश्यकता को पूरा करती है, हमने पहले ही दर्शाया है कि यद्यपि प्रत्येक मौजा के संबंध में भूमि के खसरा संख्या दिए गए हैं, तथापि भूमि के विभिन्न टुकड़ों का अधिग्रहण या तो पूर्णतः या आंशिक रूप से किया गया है। जहाँ कहीं किसी बड़े भूखंड के किसी भाग का अधिग्रहण किया गया है, वहाँ यह विवरण नहीं दिया गया है कि कौन-

> सा भाग अधिग्रहित किया जा रहा है। जब तक यह ज्ञात न हो कि कौन-सा भाग अधिग्रहित किया जाना है, तब तक याचिकाकर्ता अधिग्रहण के प्रभाव को समझने या अधिनियम में निर्दिष्ट प्रयोजनों हेतु अधिग्रहित भूमि के उपयोग के संबंध में आपत्ति उठाने अथवा प्रतिकर का दावा करने में सक्षम नहीं होंगे। यह स्थापित विधि है कि जब कोई अधिनियम किसी कार्य को किसी विशिष्ट विधि से करने की अपेक्षा करता है, तो वह कार्य उसी विधि से किया जाना चाहिए। अधिनियम के प्रत्येक शब्द को उसका उचित अर्थ दिया जाना चाहिए। हमारे मत में, आक्षेपित अधिसूचना वैधानिक आवश्यकता को पूरा नहीं करती। यह अस्पष्ट है। ऐसे मामलों में न्यूनतम अपेक्षा यह है कि अधिग्रहण अधिसूचना उस व्यक्ति को, जिसकी भूमि अधिग्रहित की जा रही है, यह बताने में सक्षम हो कि वह क्या खोने वाला है। अतः वर्तमान मामले में आक्षेपित अधिसूचना विधि के अनुरूप नहीं है।"

33. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि उपर्युक्त मामले में इस न्यायालय ने यह अवलोकन किया कि *यह स्थापित विधि है कि जब कोई अधिनियम किसी कार्य को किसी विशिष्ट विधि से करने की अपेक्षा करता है, तो वह कार्य उसी विधि से किया जाना चाहिए।* यह भी देखा जा सकता है कि इस न्यायालय ने यह अभिमत व्यक्त किया कि उक्त मामले में अधिग्रहण अधिसूचना वैधानिक आवश्यकताओं को पूरा करने में असफल रही और वह अस्पष्ट थी। आगे यह भी अभिमत व्यक्त किया गया कि न्यूनतम अपेक्षा यह थी कि अधिग्रहण अधिसूचना उस व्यक्ति को, जिसकी भूमि अधिग्रहित की जानी थी, यह बताने में सक्षम हो कि वह क्या खोने वाला है। अतः यह अभिनिर्धारित किया गया कि अधिग्रहण अधिसूचना विधि के अनुरूप नहीं थी।

34. अधिग्रहण अधिसूचना को वैधानिक आवश्यकताओं को पूरा न करने के कारण अवैध ठहराने तथा यह भी पाते हुए कि उक्त मामले में भूमिधारकों की भूमि का कब्जा अधिग्रहण अधिसूचना के अनुसरण में विधि के अनुरूप नहीं लिया गया था, इस न्यायालय के समक्ष यह प्रश्न विचारणीय हुआ कि भूमिधारकों को कौन-सी राहत प्रदान की जा सकती है। इस संबंध में इस न्यायालय ने निम्नलिखित अवलोकन किया:

> "**14.** ... उच्च न्यायालय ने उचित रूप से यह अवलोकन किया कि वर्तमान मामले में भूमि का अधिग्रहण एक अत्यंत महत्वपूर्ण राष्ट्रीय परियोजना अर्थात राष्ट्रीय राजमार्ग के निर्माण के लिए किया गया था।

> अधिग्रहित भूमि पर राष्ट्रीय राजमार्ग का निर्माण, जैसा कि सुनवाई के दौरान हमें अवगत कराया गया, पहले ही पूर्ण हो चुका है। इस अवस्था में आक्षेपित अधिसूचना को निरस्त करने से कोई उपयोगी उद्देश्य सिद्ध नहीं होगा। हम इस विधिक स्थिति से अनभिज्ञ नहीं रह सकते कि अधिग्रहण प्राधिकारी, आक्षेपित अधिसूचना के निरस्त होने की स्थिति में, भूमि के अधिग्रहण हेतु नई अधिसूचना जारी कर सकता है। इसका परिणाम केवल यह होगा कि भूमि के मूल्यों में वृद्धि की प्रवृत्ति को ध्यान में रखते हुए, भूमिधारकों को देय प्रतिकर की राशि अधिक हो सकती है। अतः अंतिम प्रश्न भूमिधारकों को देय प्रतिकर की राशि के निर्धारण का ही होगा। इस अवस्था में अधिसूचना को निरस्त करना अनेक कठिनाइयों एवं व्यावहारिक समस्याओं को उत्पन्न करेगा। याचिकाकर्ताओं के अधिकारों तथा आक्षेपित अधिसूचना को निरस्त करने में निहित समस्याओं के बीच संतुलन स्थापित करते हुए, हमारा मत है कि बेहतर उपाय यह होगा कि भूमिधारकों, अर्थात् रिट याचिकाकर्ताओं को, उन्हें हुई वंचना के लिए उपयुक्त प्रतिकर प्रदान किया जाए। न्याय के हित हमें इस मार्ग को अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं।”

35. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि उक्त मामले में इस न्यायालय ने यह अवलोकन किया कि कलकत्ता उच्च न्यायालय ने उचित रूप से यह माना कि *भूमि का अधिग्रहण एक अत्यंत महत्वपूर्ण राष्ट्रीय परियोजना, अर्थात राष्ट्रीय राजमार्ग के निर्माण के लिए किया गया था।* इस न्यायालय ने यह भी अवलोकन किया कि अधिग्रहित भूमि पर राष्ट्रीय राजमार्ग का निर्माण पहले ही पूर्ण हो चुका था। आगे यह भी अवलोकन किया गया कि इस अवस्था में अधिग्रहण अधिसूचना को निरस्त करने से कोई उपयोगी उद्देश्य सिद्ध नहीं होगा। महत्वपूर्ण रूप से, इस न्यायालय ने यह भी अवलोकन किया कि अधिग्रहण प्राधिकारी, अधिसूचना के निरस्त होने की स्थिति में, भूमि अधिग्रहण हेतु नई अधिसूचना जारी कर सकता है और इसका परिणाम केवल यह होगा कि भूमिधारकों को देय प्रतिकर की राशि अधिक हो सकती है। अतः इस न्यायालय ने यह अभिमत व्यक्त किया कि अंतिम प्रश्न भूमिधारकों को देय प्रतिकर की राशि के निर्धारण का होगा। उपरोक्त अवलोकन करने के पश्चात, *इस न्यायालय ने यह निर्णय किया कि उचित मार्ग यह होगा कि भूमि स्वामियों को उस हानि के लिए उपयुक्त रूप से मुआवजा दिया जाए, जिससे वे वंचित हुए हैं, तथा*

न्याय के हित इस न्यायालय को उक्त मार्ग अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। अतः, उक्त मामले में इस न्यायालय द्वारा प्रदान की गई राहत को *पैरा 15* के रूप में इस प्रकार विन्यस्त किया गया, जो इस प्रकार है:

> **"15. सामान्यतः, प्रतिकर का निर्धारण भूमि अधिग्रहण अधिसूचना जारी होने की तिथि पर भूमि के बाजार मूल्य के अनुसार किया जाता है। इस न्यायालय के निर्णयों के रूप में ऐसे दृष्टांत उपलब्ध हैं, जहाँ समान परिस्थितियों में आक्षेपित अधिसूचना को निरस्त करने के स्थान पर इस न्यायालय ने अधिसूचना की तिथि को परिवर्तित किया है, ताकि भूमिधारकों को समुचित प्रतिकर प्राप्त हो सके।** इस संदर्भ में निम्नलिखित निर्णयों का उल्लेख किया जा सकता है:
>
> *(a)* *उज्जैन विकास प्राधिकरण बनाम राज कुमार जोहरी* [(1992) 1 एस.सी.सी 328]
>
> *(b)* *गौरी शंकर गौर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* [(1994) 1 एस.सी.सी 92]
>
> *(c)* *हाजी सईद खान बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* [(2001) 9 एस.सी.सी 513]
>
> **इस दिशा में अगला प्रश्न यह है कि वर्तमान मामले के तथ्यों में प्रतिकर की राशि के निर्धारण हेतु कौन-सी तिथि महत्वपूर्ण मानी जाए। हमारा मत है कि वर्तमान मामले में प्रासंगिक तिथि वह होनी चाहिए जब प्रतिवादियों द्वारा रिट याचिकाकर्ताओं से भूमि का कब्जा लिया गया। यह तिथि निर्विवाद रूप से 19-2-2003 है। अतः हम निर्देश देते हैं कि रिट याचिकाकर्ताओं को देय प्रतिकर का निर्धारण 19-2-2003 की तिथि के अनुसार किया जाए, अर्थात वह तिथि जब उन्हें उनकी भूमि के कब्जे से वंचित किया गया। हम आक्षेपित अधिसूचना को निरस्त नहीं करते, ताकि राष्ट्रीय राजमार्ग के निर्माण हेतु अधिग्रहित भूमि के उपयोग से संबंधित जो कार्य पहले ही हो चुका है, वह प्रभावित न हो।** हम निर्देश देते हैं कि अधिग्रहित भूमि के लिए प्रतिकर का निर्धारण 19-2-2003 की तिथि के अनुसार शीघ्रता से, और आज से दस सप्ताह के भीतर किया जाए तथा इस प्रकार निर्धारित प्रतिकर की राशि, पहले से दिए गए प्रतिकर को समायोजित करते हुए, उसके

पश्चात आठ सप्ताह के भीतर रिट याचिकाकर्ताओं को प्रदान की जाए। **इस प्रकार निर्धारित प्रतिकर की राशि पर ब्याज के दावे का निर्णय विधि के अनुसार उपयुक्त प्राधिकारी द्वारा किया जाएगा। इस संबंध में पक्षकारों को उपलब्ध अन्य वैधानिक अधिकारों के विषय में हम कोई अभिमत व्यक्त नहीं करते और यदि ऐसे अधिकार उपलब्ध हों, तो पक्षकार उन्हें प्रयोग करने के लिए स्वतंत्र होंगे। इस आदेश के अंतर्गत हमारे द्वारा निर्धारित प्रतिकर, तथा अन्य लाभ जो प्रतिवादी उन पक्षकारों को प्रदान करते हैं जिनकी भूमि अधिनियम के अंतर्गत अधिग्रहित की जाती है, उन्हें रिट याचिकाकर्ताओं को इस निर्णय में दिए गए निर्देशों के अनुसार प्रदान किए जाएँ।"**

(जोर दिया गया)

36. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि उपर्युक्त मामले में इस न्यायालय ने यह अवलोकन किया कि सामान्यतः प्रतिकर का निर्धारण भूमि अधिग्रहण अधिसूचना जारी होने की तिथि पर भूमि के बाजार मूल्य के अनुसार किया जाता है, किन्तु इस न्यायालय के ऐसे निर्णय भी हैं जहाँ समान परिस्थितियों में *आक्षेपित अधिसूचना को निरस्त करने के स्थान पर* अधिसूचना की तिथि को परिवर्तित किया गया है, ताकि भूमिधारकों को समुचित प्रतिकर प्राप्त हो सके। इस न्यायालय ने यह निर्देश दिया कि भूमिधारकों को देय प्रतिकर का निर्धारण उस तिथि के अनुसार किया जाए, जब प्रतिवादियों द्वारा भूमि का कब्जा लिया गया था, अर्थात 19 फरवरी 2003।

37. *तुकाराम काना जोशी* (उपर्युक्त) के मामले में, ठाणे जिला के शिरवामे ग्राम, तहसील एवं जिला ठाणे स्थित भूमि को 6 जून 1964 को 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत उल्हास खोर परियोजना, अर्थात औद्योगिक विकास हेतु परियोजना, के लिए अधिसूचित किया गया था। तथापि, इसके पश्चात कोई आगे की कार्यवाही नहीं की गई और अधिग्रहण कार्यवाही समाप्त हो गई। उक्त मामले में प्रतिवादी प्राधिकारियों को वर्ष 1981 में यह अनुभव हुआ कि अपीलकर्ताओं के साथ गंभीर अन्याय हुआ है, अतः 14 मई 1981 को 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत एक नई अधिसूचना जारी की गई। तथापि, इसके पश्चात भी कोई कार्यवाही प्रारंभ नहीं की गई और परिणामस्वरूप यह कार्यवाही भी स्वतः समाप्त हो गई। उक्त मामले में जब अपीलकर्ताओं ने इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया, तब इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह अवलोकन किया कि यद्यपि *संपत्ति का अधिकार* अब मौलिक अधिकार नहीं रहा है, तथापि किसी

नागरिक की संपत्ति का कब्जा लेना या अधिग्रहण करना निश्चित रूप से उसे वंचित करना है और ऐसा वंचन केवल "विधि" के अनुसार ही किया जा सकता है, जैसा कि यह शब्द संविधान के अनुच्छेद 300-ए में प्रयुक्त हुआ है। उक्त मामले के अनुच्छेद 22 में इस न्यायालय ने यह भी अवलोकन किया कि संबंधित राज्य ने एक स्वागत योग्य सुझाव प्रस्तुत किया कि अपीलकर्त्ताओं की शिकायतों के निवारण हेतु प्रतिवादी प्राधिकारी विवादित भूमि को 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत पुनः अधिसूचित करेंगे तथा भूमि का बाजार मूल्य उस तिथि के अनुसार निर्धारित किया जाएगा, जिस तिथि को धारा 4 की अधिसूचना पुनः राजपत्र में प्रकाशित की जाएगी।

38. *तुकाराम काना जोशी* (उपर्युक्त) के उक्त मामले में इस न्यायालय ने यह अवलोकन किया कि *संपति का अधिकार* अब केवल संवैधानिक या वैधानिक अधिकार ही नहीं, बल्कि एक "मानव अधिकार" भी माना जाता है। यह भी अवलोकन किया गया कि मानव अधिकार व्यक्तिगत अधिकारों के क्षेत्र में आते हैं, जैसे स्वास्थ्य का अधिकार, आजीविका का अधिकार, आश्रय का अधिकार तथा रोजगार का अधिकार आदि। इस न्यायालय ने आगे यह भी अवलोकन किया कि अब मानव अधिकारों का स्वरूप और भी व्यापक हो गया है तथा *संपति का अधिकार* भी इस व्यापक आयाम का अभिन्न अंग माना जाता है।

39. *संपति के अधिकार* के संबंध में इस न्यायालय के दो हालिया निर्णयों का उल्लेख करना उपयुक्त होगा।

40. इस न्यायालय ने *विद्या देवी बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य एवं अन्य* [6] के मामले में, इस विषय पर पूर्ववर्ती निर्णयों का अवलोकन करते हुए निम्नलिखित अवलोकन किया:

> "**12.1.** अपीलकर्ता को वर्ष 1967 में उसकी संपत्ति से जबरन वंचित (अधिग्रहित) कर दिया गया था, उस समय संपत्ति का अधिकार संविधान के भाग III के अनुच्छेद 31 द्वारा प्रदत्त एक मौलिक अधिकार था। अनुच्छेद 31 निजी संपत्ति के अधिकार की गारंटी देता था [*पश्चिम बंगाल राज्य बनाम सुबोध गोपाल बोस*, (1953) 2 एससीसी 688 : एआईआर 1954 एससी 92], जिसे विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के बिना तथा उचित एवं न्यायसंगत मुआवजा दिए बिना छीना नहीं जा सकता था।
>
> **12.2.** संपत्ति का अधिकार संविधान (चवालीसवाँ संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा मौलिक अधिकार नहीं रहा, तथापि यह एक कल्याणकारी

6 2020 आईएनएससी 23 : [2020] 1 एससीआर 749 : (2020) 2 एससीसी 569

राज्य में मानव अधिकार के रूप में बना रहा [*तुकाराम काना जोशी बनाम एमआईडीसी* (2013) 1 एससीसी 353 : (2013) 1 एससीसी (सिविल) 491], तथा संविधान के अनुच्छेद 300-A के अंतर्गत एक संवैधानिक अधिकार है। अनुच्छेद 300-A यह उपबंध करता है कि किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से विधि के प्राधिकार के बिना वंचित नहीं किया जा सकता। राज्य किसी नागरिक को उसकी संपत्ति से केवल विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित कर सकता है। यद्यपि मुआवजा देने का दायित्व अनुच्छेद 300-A में स्पष्ट रूप से उल्लिखित नहीं है, तथापि इसे उस अनुच्छेद से निहित रूप में ग्रहण किया जा सकता है। [*के.टी. प्लांटेशन (प्रा.) लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य* (2011) 9 एससीसी 1 : (2011) 4 एससीसी (सिविल) 414]

12.3. किसी व्यक्ति को उसकी निजी संपत्ति से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया का पालन किए बिना जबरन वंचित करना, एक मानव अधिकार का उल्लंघन होगा, साथ ही संविधान के अनुच्छेद 300-A के अंतर्गत प्रदत्त संवैधानिक अधिकार का भी उल्लंघन होगा। इस संदर्भ में [*हिंदुस्तान पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम डेरियस शापुर चेन्नई* (2005) 7 एससीसी 627] के निर्णय पर अवलंबन किया गया, जिसमें इस न्यायालय ने यह कहा कि: (एससीसी पृ. 634, पैरा 6)

> *"6.* ... संविधान के अनुच्छेद 300-ए के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, राज्य 'अधिपत्य के अधिकार' का प्रयोग करते हुए किसी व्यक्ति के संपत्ति के अधिकार में हस्तक्षेप कर सकता है, परंतु ऐसा केवल सार्वजनिक प्रयोजन हेतु होना चाहिए तथा *इसके लिए युक्तिसंगत प्रतिकर का भुगतान किया जाना आवश्यक है।"*

(जोर दिया गया)

12.4. एन. पद्मम्मा बनाम एस. रामकृष्ण रेड्डी [*एन. पद्मम्मा बनाम एस. रामकृष्ण रेड्डी* (2008) 15 एस.सी.सी 517] के मामले में, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि: (एस.सी.सी पृष्ठ 526, पैरा 21)

> *"21. यदि संपत्ति का अधिकार एक मानव अधिकार तथा संवैधानिक अधिकार दोनों है, तो इसे विधि के अनुसार ही छीना जा सकता है।* संविधान का अनुच्छेद 300-ए इस अधिकार की रक्षा करता है। "अधिनियम के वे प्रावधान, जो ऐसे अधिकार से वंचित करने का प्रयत्न करते हैं, *भारत के संविधान के अनुच्छेद 300-A के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, कठोर रूप से व्याख्यायित किए जाने चाहिए।"*

(जोर दिया गया)

12.5. दिल्ली एयरटेक सर्विसेज (पी) लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [दिल्ली एयरटेक सर्विसेज (पी) लिमिटेड बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2011) 9 एससीसी 354 : (2011) 4 एससीसी (सिविल) 673] के मामले में, इस न्यायालय ने संपत्ति के अधिकार को एक मौलिक मानव अधिकार के रूप में निम्नलिखित शब्दों में मान्यता दी:

> *"30. प्रत्येक विधि प्रणाली तथा विभिन्न राजनीतिक विचारकों द्वारा यह स्वीकार किया गया है कि संपत्ति का कुछ अधिकार शासन के अत्याचार एवं आर्थिक उत्पीड़न के विरुद्ध एक अनिवार्य सुरक्षा है।* जेफरसन का मत था कि संपत्ति के समर्थन के बिना स्वतंत्रता लंबे समय तक अस्तित्व में नहीं रह सकती। 'संपत्ति की सुरक्षा आवश्यक है, अन्यथा स्वतंत्रता अस्तित्व में नहीं रह सकती'–यह जॉन एडम्स का मत था। वास्तव में यह विचार कि *संपत्ति स्वयं वह आधार है, जिसे संरक्षित रखना आवश्यक है, ताकि अन्य संवैधानिक मूल्यों का विकास हो सके, राजनीतिक विचारकों एवं विधिवेत्ताओं के बीच सर्वसम्मति का विषय है।"*

(जोर दिया गया)

12.6. *जीलुभाई नानभाई खचर बनाम गुजरात राज्य* [*जीलुभाई नानभाई खचर बनाम गुजरात राज्य*, 1995 सप्ली. (1) एससीसी 596] के मामले में इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिमत व्यक्त किया: (एस.सी.सी पृष्ठ 627, अनुच्छेद 48)

> *"48.* ... अन्य शब्दों में, अनुच्छेद 300-ए केवल राज्य की शक्तियों को इस सीमा तक प्रतिबंधित करता है कि किसी भी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से विधि के अधिकार के बिना वंचित नहीं किया जा सकता। *विधि की स्वीकृति के बिना कोई वंचन नहीं हो सकता। किसी अन्य माध्यम से किया गया वंचन, अनुच्छेद 300-ए के अंतर्गत अधिग्रहण या कब्जा लेना नहीं माना जाएगा।* दूसरे शब्दों में, यदि विधि नहीं है, तो वंचन भी नहीं है।"

(जोर दिया गया)

12.7. वर्तमान मामले में, अपीलकर्त्ता को उसकी संपत्ति से बलपूर्वक वंचित नहीं किया जा सकता था, जब तक कि इसके लिए कोई विधिक स्वीकृति न हो, विधि की समुचित प्रक्रिया का पालन न किया गया हो, तथा उसे न्यायोचित प्रतिकर का भुगतान न किया गया हो, जो कि वर्ष 1967 में बलपूर्वक वंचन की तिथि पर एक मौलिक अधिकार था।

12.8. राज्य का यह तर्क कि अपीलकर्त्ता या उसके पूर्ववर्तियों ने "मौखिक रूप से" अधिग्रहण के लिए सहमति दी थी, पूर्णतः निराधार है। हम यह पाते हैं कि राज्य द्वारा अपीलकर्त्ता को उसकी संपत्ति से वंचित करने में पूर्णतः अधिकार एवं विधिक स्वीकृति का अभाव है।

12.9. विधि के शासन से संचालित एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में, राज्य किसी नागरिक को उसकी संपत्ति से विधि की स्वीकृति के बिना वंचित नहीं कर सकता। इस संदर्भ में इस न्यायालय के निर्णय *तुकाराम काना जोशी बनाम एमआईडीसी* [*तुकाराम काना जोशी बनाम एमआईडीसी* (2013) 1 एससीसी 353 : (2013) 1 एससीसी (सिविल) 491] पर निर्भरता रखी गई, जिसमें यह प्रतिपादित किया गया कि राज्य को

अधिग्रहण, अधिग्रहण हेतु अधिभोग (requisition) अथवा अन्य किसी वैधानिक माध्यम से संपत्ति प्राप्त करने की प्रक्रिया का पालन करना अनिवार्य है। विधि के शासन से संचालित एक कल्याणकारी राज्य स्वयं को संविधान द्वारा प्रदत्त सीमाओं से परे नहीं रख सकता।

12.10. इस न्यायालय ने *हरियाणा राज्य बनाम मुकेश कुमार* [*हरियाणा राज्य बनाम मुकेश कुमार* (2011) 10 एससीसी 404 : (2012) 3 एससीसी (सिविल) 769] में यह अभिमत व्यक्त किया कि संपत्ति का अधिकार अब केवल एक संवैधानिक या वैधानिक अधिकार ही नहीं, बल्कि एक मानव अधिकार भी है। मानव अधिकारों को व्यक्तिगत अधिकारों के क्षेत्र में माना गया है, जैसे आश्रय का अधिकार, आजीविका का अधिकार, स्वास्थ्य का अधिकार, रोजगार का अधिकार आदि। मानव अधिकारों का स्वरूप बहुआयामी हो चुका है।

....

12.13. ऐसे मामलों में जहाँ न्याय की मांग अत्यंत प्रबल हो, संवैधानिक न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग न्याय को प्रोत्साहित करने के लिए करेगा, न कि उसे विफल करने के लिए। [*पी. एस. सदाशिवस्वामी बनाम तमिलनाडु राज्य* (1975) 1 एससीसी 152 : 1975 एससीसी (एल एंड एस) 22]"

41. ***अल्ट्रा-टेक सीमेंट लिमिटेड बनाम मस्त राम एवं अन्य,*** [7] के मामले में इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिमत व्यक्त किया:

"**D. संविधान के अनुच्छेद 300-ए के अंतर्गत राज्य की भूमिका**

43. हमारे देश में संपत्ति का अधिकार विभिन्न अधिकारों का समुच्चय है, जिसका विवरण इस न्यायालय ने *कोलकाता नगर निगम बनाम बिमल कुमार शाह,* 2024 एससीसी ऑनलाइन एससी 968 में किया है। इस न्यायालय की एक पीठ ने सात ऐसे गैर-सम्पूर्ण उप-अधिकारों की पहचान की, जो उस समय भूमिधर को प्राप्त होते हैं जब राज्य उसकी संपत्ति का अधिग्रहण करना चाहता है। उक्त निर्णय के प्रासंगिक अवलोकन निम्नानुसार हैं:

7 2024 आईएनएससी 709 : [2024] 9 एससीआर 443 : 2024 एससीसी ऑनलाइन 2598

"...27.

... ऐसे सात उप-अधिकारों की पहचान की जा सकती है, यद्यपि ये सम्पूर्ण नहीं हैं। ये हैं: (i) राज्य का दायित्व कि वह व्यक्ति को सूचित करे कि उसकी संपति का अधिग्रहण किया जाना प्रस्तावित है – सूचना का अधिकार, (ii) राज्य का दायित्व कि वह अधिग्रहण के विरुद्ध आपत्तियाँ सुने – सुनवाई का अधिकार, (iii) राज्य का दायित्व कि वह अपने निर्णय की सूचना दे – कारणयुक्त निर्णय का अधिकार, (iv) राज्य का दायित्व कि अधिग्रहण केवल सार्वजनिक प्रयोजन हेतु हो – सार्वजनिक प्रयोजन का सिद्धांत, ***(v) राज्य का दायित्व कि पुनर्वास एवं प्रतिपूर्ति सुनिश्चित करे – प्रतिकर/पुनर्स्थापन का अधिकार, (vi) राज्य का दायित्व कि अधिग्रहण प्रक्रिया समयबद्ध एवं प्रभावी हो – त्वरित एवं कुशल प्रक्रिया का अधिकार,*** *तथा (vii) कार्यवाही का अंतिम निष्कर्ष – समापन का अधिकार..."*

[जोर दिया गया]

इस न्यायालय ने यह भी प्रतिपादित किया कि उचित एवं न्यायसंगत प्रतिकर किसी भी अधिग्रहण प्रक्रिया के लिए *अनिवार्य तत्व* है।

44. *रॉय एस्टेट बनाम झारखंड राज्य* (2009) 12 एस.सी.सी 194; *भारत संघ बनाम महेंद्र गिरजी* (2010) 15 एस.सी.सी 682 तथा *मनसाराम बनाम एस.पी. पाठक* (1984) 1 एस.सी.सी 125 में इस न्यायालय ने यह रेखांकित किया कि विधियों में निर्धारित समयसीमा का पालन करना तथा प्रतिकर का निर्धारण एवं भुगतान यथाशीघ्र किया जाना अत्यंत आवश्यक है।

45. विवादित भूमि का अधिग्रहण 1894 के अधिनियम की धारा 17(4) के अंतर्गत आपातकालीन परिस्थितियों में विशेष शक्तियों का प्रयोग करते हुए किया गया। धारा 17(4) के प्रयोग से भूमि स्वामियों

को धारा 5ए के अंतर्गत अधिग्रहण कार्यवाही के विरुद्ध आपत्ति उठाने का वैधानिक अधिकार समाप्त हो जाता है। ऐसी परिस्थितियाँ राज्य पर यह कठोर दायित्व आरोपित करती हैं कि वह भूमि स्वामियों को शीघ्रता से न्याय उपलब्ध कराए, उन्हें उचित एवं न्यायसंगत मुआवजा प्रदान करके। इस न्यायालय द्वारा *कोलकाता नगर निगम* (उपर्युक्त) मामले में भूमि स्वामियों के सात उप-अधिकारों को राज्य के समतुल्य दायित्वों के रूप में माना गया है। हमें यह कहते हुए खेद है कि अनुपूरक अवार्ड के अंतर्गत मुआवजे के रूप में निर्धारित ₹3,05,31,095/- की राशि दो वर्षों से अधिक समय तक भूमि स्वामियों को अदा नहीं की गई है, और हिमाचल प्रदेश राज्य ने, एक कल्याणकारी राज्य होने के बावजूद, इस राशि का शीघ्र भुगतान सुनिश्चित करने के लिए कोई प्रयास नहीं किया है।

46. इस न्यायालय ने *धर्मनिधर मिश्रा (मृतक) बनाम बिहार राज्य*, 2024 एससीसी ऑनलाइन एससी 932 तथा *हरियाणा राज्य बनाम मुकेश कुमार* (2011) 10 एससीसी 404 में यह प्रतिपादित किया है कि संपत्ति का अधिकार अब केवल एक संवैधानिक या वैधानिक अधिकार ही नहीं, बल्कि एक मानव अधिकार भी माना जाता है। इस न्यायालय ने *तुकाराम काना जोशी, पावर ऑफ अटॉर्नी धारक के माध्यम से बनाम एम.आई.डी.सी.* (2013) 1 एससीसी 353 में यह भी कहा कि एक कल्याणकारी राज्य में वैधानिक प्राधिकारों पर यह विधिक दायित्व है कि वे जिन व्यक्तियों की भूमि अधिग्रहित की जा रही है, उन्हें पर्याप्त मुआवजा प्रदान करें तथा उनका पुनर्वास सुनिश्चित करें। औद्योगिक विकास के नाम पर ऐसे दायित्वों का निर्वहन न करना किसी भी कल्याणकारी राज्य के लिए स्वीकार्य नहीं है, क्योंकि इससे व्यक्ति को उसके स्थान से विस्थापित करना तथा उसके संवैधानिक/मानव अधिकार से वंचित करना माना जाएगा।

47. यह तथ्य कि मुआवजे के निर्धारण एवं भुगतान में समय अत्यंत महत्वपूर्ण है, इस न्यायालय के निर्णय *कुकरेजा कंस्ट्रक्शन कंपनी बनाम महाराष्ट्र राज्य*, 2024 एससीसी ऑनलाइन एससी 2547 से भी स्पष्ट होता है, जिसमें यह प्रतिपादित किया गया है कि एक बार

मुआवजा निर्धारित हो जाने के पश्चात उसका भुगतान तत्काल किया जाना चाहिए, बिना इस अपेक्षा के कि भूमि स्वामी कोई अभ्यावेदन या अनुरोध करें। राज्य पर यह दायित्व आरोपित है कि वह उक्त मुआवजा भूमि स्वामियों को प्रदान करे, अन्यथा यह संविधान के अनुच्छेद 300-ए का उल्लंघन होगा।

48. वर्तमान मामले में, हिमाचल प्रदेश सरकार को एक कल्याणकारी राज्य के रूप में सक्रिय रूप से हस्तक्षेप करना चाहिए था, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि मुआवजे की देय राशि का भुगतान यथाशीघ्र किया जाए। राज्य यह कहकर अपने संवैधानिक एवं वैधानिक दायित्व से विमुख नहीं हो सकता कि उसकी भूमिका केवल अपीलकर्ता, जेएएल और उसके बीच हुए एमओयू के अंतर्गत अधिग्रहण कार्यवाही प्रारंभ करने तक सीमित थी। हम पाते हैं कि संबंधित भूमि का स्वामित्व भूमि स्वामियों से छीन लेने के पश्चात मुआवजे के भुगतान में हुई देरी, संविधान के अनुच्छेद 300-ए की मूल भावना तथा कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के प्रतिकूल है।

49. सार्वजनिक उद्देश्य के लिए भूमि का अधिग्रहण सरकार की 'प्रख्यात अधिकार' की शक्ति के अंतर्गत किया जाता है, जो प्रायः भूमि स्वामियों की इच्छा के विरुद्ध होता है। जब इस प्रकार की शक्ति का प्रयोग किया जाता है, तब इसके साथ सरकार पर यह बाध्यकारी कर्तव्य एवं दायित्व भी होता है कि जिन व्यक्तियों की भूमि अधिग्रहित की गई है, उन्हें विधिक अवार्ड में घोषित मुआवजे/प्रदत्त राशि का भुगतान यथाशीघ्र सुनिश्चित किया जाए।

50. विशेष परिस्थितियों में राज्य सरकार से यह अपेक्षित था कि वह भूमि स्वामियों को मुआवजे की देय राशि अपने स्वयं के कोष से अदा करे और तत्पश्चात उस राशि की वसूली जेएएल से करे। गरीब भूमि स्वामियों को शक्तिशाली कॉरपोरेट संस्थानों के पीछे भटकने के लिए बाध्य करने के बजाय, राज्य को चाहिए था कि वह जेएएल को आवश्यक भुगतान करने के लिए बाध्य करता।"

42. संपत्ति का अधिकार संविधान (चवालीसवाँ संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा मौलिक अधिकार नहीं रहा, तथापि यह एक कल्याणकारी राज्य में मानव अधिकार के रूप में तथा संविधान के अनुच्छेद 300-ए के अंतर्गत एक संवैधानिक अधिकार के रूप में विद्यमान है।

43. संविधान का अनुच्छेद 300-ए यह उपबंधित करता है कि *किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से विधि के अधिकार के बिना वंचित नहीं किया जाएगा।* राज्य किसी नागरिक को उसकी संपत्ति से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित कर सकता है।

44. इस न्यायालय ने ***विद्या देवी*** (उपर्युक्त) के मामले में यह अवलोकन किया कि विधि के शासन से संचालित एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में राज्य किसी नागरिक को विधि की स्वीकृति के बिना उसकी संपत्ति से वंचित नहीं कर सकता। यह भी अवलोकन किया गया कि विधि के शासन से संचालित एक कल्याणकारी राज्य स्वयं को संविधान द्वारा प्रदत्त सीमाओं से परे नहीं रख सकता।

45. हाल ही में, ***अल्ट्रा-टेक सीमेंट लिमिटेड*** (उपर्युक्त) के मामले में इस न्यायालय ने यह अवलोकन किया कि सरकार, एक कल्याणकारी राज्य होने के नाते, यह सुनिश्चित करने हेतु सक्रिय रूप से हस्तक्षेप करे कि प्रतिकर की आवश्यक राशि का भुगतान यथाशीघ्र किया जाए। यह भी अवलोकन किया गया कि राज्य यह कहकर अपनी संवैधानिक एवं वैधानिक जिम्मेदारी से मुक्त नहीं हो सकता कि उसकी भूमिका केवल अधिग्रहण कार्यवाही प्रारंभ करने तक सीमित थी। अतः यह कहा गया कि भूमि स्वामित्व को छीन लेने के पश्चात विधि के अनुसार प्रतिकर के भुगतान में विलंब, अनुच्छेद 300-ए की संवैधानिक भावना तथा कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के प्रतिकूल है।

46. उपर्युक्त ***अल्ट्रा-टेक सीमेंट लिमिटेड (उपर्युक्त)*** के मामले में, इस न्यायालय ने आगे यह भी अवलोकन किया कि सार्वजनिक उद्देश्य के लिए भूमि का अधिग्रहण सरकार की प्रख्यात अधिकार की शक्ति के अंतर्गत किया जाता है, जो प्रायः भूमि स्वामियों की इच्छा के विरुद्ध होता है। अतः यह कहा गया कि जब इस प्रकार की शक्ति का प्रयोग किया जाता है, तो इसके साथ सरकार पर यह बाध्यकारी कर्तव्य एवं दायित्व भी होता है कि जिन व्यक्तियों की भूमि अधिग्रहित की गई है, उन्हें वैधानिक अवार्ड में घोषित मुआवजे/प्रदत्त राशि का भुगतान यथाशीघ्र सुनिश्चित किया जाए।

47. वर्तमान चर्चा के उद्देश्य से इस न्यायालय के निर्णय, ***के. कृष्णा रेड्डी एवं अन्य बनाम विशेष उप कलेक्टर, भूमि अधिग्रहण इकाई-II, एलएमडी करीमनगर, आंध्र प्रदेश,*** [8] के मामले में, विशेष रूप से पैरा 12 में की गई निम्नलिखित टिप्पणी का उल्लेख करना भी उपयुक्त होगा:

8 1988 आईएनएससी 265 : [1988] सप्ली. 2 एससीआर 853 : (1988) 4 एससीसी 163

> “**12.** हम दावेदारों की इस चिंता और आवश्यकता को भली-भाँति समझ सकते हैं कि उन्हें तत्काल मुआवजा प्राप्त हो। चाहे वह जैसा भी हो। भूमि का अधिग्रहण वर्ष 1977 में ही कर लिया गया था। एक दशक बीत चुका है। अब मामले को पुनः प्रेषित करने का अर्थ है मुकदमेबाजी का एक और दौर। इससे मुआवजा प्राप्त करने में और विलंब होगा। आखिरकार, धन वही है जो धन से खरीदा जा सकता है। वर्ष 1977 में मुआवजे की राशि से जो कुछ दावेदार खरीद सकते थे, वह वर्ष 1988 में संभव नहीं है, शायद उसका आधा भी नहीं। यह सामान्य अनुभव है कि रुपये की क्रय शक्ति लगातार घट रही है। बढ़ती महँगाई के साथ, विलंबित भुगतान मुआवजे के समस्त आकर्षण और उपयोगिता को समाप्त कर सकता है। कुछ मामलों में, यह विलंब दावेदारों के हितों के लिए हानिकारक भी हो सकता है। भारतीय कृषक सामान्यतः किसी अन्य आजीविका में संलग्न नहीं होते। वे पूर्णतः भूमि पर निर्भर रहते हैं। यदि उन्हें विस्थापित कर दिया जाए, तो वे स्वयं को असहाय स्थिति में पाएंगे। वे पूरी तरह से निराधार हो जाते हैं। उनके पास कोई बचत नहीं होती, जिस पर वे निर्भर रह सकें। उनके पास कोई विकल्प नहीं होता। यदि उनका पुनर्वास न किया जाए, तो उन्हें भूखमरी का सामना भी करना पड़ सकता है। ऐसे सभी मामलों में यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि अवार्ड बिना किसी विलंब के पारित किया जाए। बढ़े हुए मुआवजे का निर्धारण भी शीघ्र किया जाना चाहिए। अपीलीय न्यायालय द्वारा पुनः प्रेषण की शक्ति का प्रयोग हल्के में नहीं किया जाना चाहिए। इसका प्रयोग तब तक नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि अवार्ड पूर्णतः अस्पष्ट न हो। इसका प्रयोग तब तक नहीं किया जाना चाहिए जब तक साक्ष्य का पूर्ण अभाव न हो। यदि पुनः प्रेषण अपरिहार्य हो और बढ़े हुए मुआवजे का दावा उचित प्रतीत होता हो, तो अपीलीय न्यायालय को चाहिए कि वह कठिनाइयों को कम करने हेतु यथासंभव प्रयास करे। अपीलीय न्यायालय दावेदारों को अंतरिम भुगतान करने का निर्देश भी दे सकता है, जो अंतिम अवार्ड के अधीन समायोजन के अधीन रहेगा।”

48. यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि यहाँ के अपीलकर्ताओं को लगभग 22 वर्षों से उनके वैध देयकों से वंचित रखा गया है। यह भी विवादित नहीं किया जा सकता कि *धन का मूल्य उसी से निर्धारित होता है कि उससे क्या खरीदा जा सकता है।* धन का मूल्य इस सिद्धांत पर आधारित है कि उसे निवेश कर प्रतिफल अर्जित किया जा सकता है, तथा मुद्रास्फीति के कारण समय के साथ उसकी क्रय शक्ति घटती जाती है। वर्ष 2003 में

मुआवजे से अपीलकर्ता जो कुछ खरीद सकते थे, वह वर्ष 2025 में संभव नहीं है। अतः यह अत्यंत आवश्यक है कि भूमि अधिग्रहण के मामलों में अवार्ड का निर्धारण तथा मुआवजे का वितरण शीघ्रता से किया जाए।

49. हम पाते हैं कि वर्तमान मामले में अपीलकर्ताओं को पिछले बाईस वर्षों की अवधि के दौरान अनेक अवसरों पर न्यायालयों के दरवाजे खटखटाने पड़े। उक्त बाईस वर्षों की अवधि में अपीलकर्ताओं को उनकी संपत्ति से वंचित रखा गया, बिना इसके लिए कोई मुआवजा दिए। जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, अपीलकर्ताओं ने संबंधित भूखंड आवासीय मकानों के निर्माण के लिए खरीदे थे। न केवल वे निर्माण करने में सक्षम नहीं हो सके, बल्कि उन्हें इसके लिए कोई मुआवजा भी नहीं दिया गया। जैसा कि ऊपर उल्लेखित है, यद्यपि संपत्ति का अधिकार अब मौलिक अधिकार नहीं रहा है, तथापि भारत के संविधान के अनुच्छेद 300-ए के प्रावधानों के अनुसार यह एक संवैधानिक अधिकार है। किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से विधि के अनुसार पर्याप्त मुआवजा दिए बिना वंचित नहीं किया जा सकता।

50. वर्तमान मामले में यह स्पष्ट है कि प्रतिकर प्राप्त न होने में कोई विलंब अपीलकर्त्ताओं के कारण नहीं था, बल्कि राज्य/केआईएडीबी के अधिकारियों के शिथिल रवैये के कारण अपीलकर्त्ताओं को प्रतिकर से वंचित रखा गया।

51. केवल अवमानना कार्यवाही में नोटिस जारी होने के पश्चात ही 22 अप्रैल 2019 को एसएलएओ द्वारा प्रतिकर निर्धारित किया गया, जिसमें वर्ष 2011 के मार्गदर्शक मूल्यों को आधार बनाया गया।

52. निस्संदेह, जैसा कि हमने उपर्युक्त अवलोकन किया है, हम उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण में कोई त्रुटि नहीं पाते हैं, जिसमें यह कहा गया कि एसएलएओ तिथि को परिवर्तित नहीं कर सकता था और यह कार्य केवल इस न्यायालय द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 32/142 के अंतर्गत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए या उच्च न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 226 के अंतर्गत किया जा सकता था। तथापि, उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश को अपीलकर्ताओं को पुनः एसएलएओ द्वारा निर्धारण की कठिन प्रक्रिया से गुजरने के लिए भेजने के बजाय, पूर्ण न्याय करने के लिए संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत अपनी शक्तियों का प्रयोग करना चाहिए था। यहाँ तक कि उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने भी एक अत्यधिक तकनीकी आधार पर अपीलकर्ताओं को वाद से वंचित कर दिया।

53. उपरोक्त परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए, हम पाते हैं कि यह एक उपयुक्त मामला है जिसमें यह न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अंतर्गत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए, अपीलकर्ताओं की संबंधित भूमि के बाजार मूल्य के निर्धारण हेतु तिथि को परिवर्तित करने का निर्देश दे।

54. यदि वर्ष 2003 के बाजार मूल्य के अनुसार प्रतिकर प्रदान करने की अनुमति दी जाती है, तो यह न्याय के साथ अन्याय होगा तथा अनुच्छेद 300-ए के संवैधानिक प्रावधानों को निरर्थक बना देगा।

55. चूँकि राज्य/केआईएडीबी वर्ष 2003 से 2019 तक गहरी निष्क्रियता में रहा और केवल अवमानना कार्यवाही में नोटिस जारी होने के पश्चात ही पहली बार सक्रिय हुआ, हम पाते हैं कि यद्यपि एसएलएओ के पास बाजार मूल्य के निर्धारण हेतु तिथि परिवर्तित करने का अधिकार नहीं था, फिर भी उसने ऐसा करना उचित ही किया। उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश ने भी यह नहीं कहा कि एसएलएओ द्वारा तिथि को वर्ष 2011 तक परिवर्तित कर मुआवजे का निर्धारण करना अन्यायपूर्ण था, बल्कि केवल इस आधार पर अवार्ड को निरस्त किया कि एसएलएओ के पास ऐसा करने का अधिकार क्षेत्र नहीं था।

56. ऐसा करने का एक और कारण है। यदि मुआवजे के भुगतान में अत्यधिक विलंब के कारण, जिससे अपीलकर्ताओं को अनुच्छेद 300-ए के अंतर्गत उनके संवैधानिक अधिकार से वंचित किया गया है, भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही को निरस्त कर दिया जाता है, तो परियोजना को बचाने के लिए राज्य/केआईएडीबी के पास एकमात्र उपाय यह होगा कि वह 2013 के एलए अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत एक नई अधिग्रहण अधिसूचना जारी करे, जिससे सार्वजनिक कोष पर अत्यधिक व्यय का भार पड़ेगा।

57. अतः, हम भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के अंतर्गत इस न्यायालय की शक्तियों का प्रयोग करते हुए, न्याय के हित में यह उपयुक्त समझते हैं कि एसएलएओ को निर्देशित किया जाए कि वह यहाँ के अपीलकर्ताओं को देय मुआवजे का निर्धारण 22 अप्रैल 2019 को प्रचलित बाजार मूल्य के आधार पर करे। अपीलकर्ताओं को 1894 के एलए अधिनियम के अंतर्गत उपलब्ध सभी वैधानिक लाभ भी प्राप्त होंगे। यह आदेश किसी भी पक्ष के अधिकारों/तर्कों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होगा, यदि वे एसएलएओ द्वारा मुआवजे के नए निर्धारण से असंतुष्ट होकर किसी अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष संदर्भ प्रस्तुत करते हैं। हम आगे यह स्पष्ट करते हैं कि उच्च न्यायालय के माननीय एकल न्यायाधीश के निर्देशों के अनुपालन में पारित कोई भी अन्य अवार्ड इस निर्णय द्वारा निरस्त माना जाएगा।

58. प्रतिवादी संख्या 6 एवं 7 का यह कथन है कि उन पर इस भारी अतिरिक्त व्यय का दायित्व नहीं डाला जा सकता। उनका कहना है कि मुआवजे के निर्धारण एवं उसके भुगतान में हुई देरी उनके कारण नहीं, बल्कि राज्य तथा केआईएडीबी की निष्क्रियता के कारण हुई है। हम यह स्पष्ट करते हैं कि राज्य और केआईएडीबी एक ओर तथा प्रतिवादी संख्या 6 एवं 7 दूसरी ओर के बीच के *आपसी* विवाद के संबंध में हम कोई टिप्पणी नहीं कर रहे हैं, क्योंकि यह विवाद उनके बीच हुए एफडब्ल्यूए और/या किसी अन्य समझौते द्वारा नियंत्रित होगा। हम केवल इतना कहते हैं कि प्रतिवादी संख्या 6 एवं 7 को उनके *आपसी* विवाद के निवारण हेतु विधि में उपलब्ध उपायों का सहारा लेने की स्वतंत्रता होगी।

59. परिणामतः, अपील का निपटारा निम्नलिखित शर्तों के साथ किया जाता है:

(i) उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा दिनांक 22 नवंबर 2022 को पारित निर्णय एवं आदेश, रिट अपील संख्या 678 of 2022 (एलए-केआईएडीबी) में, निरस्त एवं अपास्त किया जाता है;

(ii) यहाँ के अपीलकर्ताओं द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष दायर रिट याचिका, अर्थात् डब्ल्यू.पी. संख्या 1627 of 2021, स्वीकार की जाती है;

(iii) एसएलएओ पक्षकारों को सुनवाई का अवसर प्रदान करने के पश्चात, आज से दो माह की अवधि के भीतर 22 अप्रैल 2019 को प्रचलित बाजार मूल्य के आधार पर एक नया अवार्ड पारित करेगा;

(iv) यहाँ के अपीलकर्ता विधि के अंतर्गत उपलब्ध सभी वैधानिक लाभों के अधिकारी होंगे;

(v) यदि कोई पक्ष उक्त अवार्ड से व्यथित हो, तो उसे संदर्भ में उस अवार्ड को चुनौती देने का अधिकार सुरक्षित रहेगा; तथा

(vi) चूँकि हमने एसएलएओ द्वारा अवार्ड पारित करने में हुई देरी के संबंध में प्रतिवादी संख्या 6 एवं 7 के राज्य/केआईएडीबी के विरुद्ध किसी भी दावे पर कोई मत व्यक्त नहीं किया है, अतः यदि एसएलएओ द्वारा पारित किए जाने वाले अवार्ड से प्रतिवादी संख्या 6 एवं 7 व्यथित होते हैं, तो उन्हें विधि के अनुसार उपलब्ध उपायों को अपनाने की स्वतंत्रता होगी।

60. लंबित आवेदन, यदि कोई हो, निस्तारित माने जाएंगे।

मामले का परिणाम: अपील का निस्तारण किया गया।

†*हेडनोट्स तैयारकर्ता:* अंकित ज्ञान

*यह अनुवाद मो. नसीम अख्तर पैनल अनुवादक (झारखंड उच्च न्यायालय, रांची) द्वारा किया गया।